RNI Reg. No. HARHIN/2015/63352

पशुधन ज्ञान

वर्ष : 8 | अंक : 02 | जुलाई, 2022 | अर्धवार्षिक, हिसार | For Free Circulation only

प्रकाशक
विस्तार शिक्षा निदेशालय
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)

प्रकाशक:

प्रो. (डॉ.) मनोज कुमार रोज

निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय

हिसार–125004 (हरियाणा)

सम्पादक:

डॉ. देवेन्द्र सिंह

सम्पादकीय मण्डल:

डॉ. वन्दना भनोट

डॉ. दिपिन चन्द्र यादव

डॉ. राजेश कुमार

प्रकाशक: प्रो. (डॉ.) मनोज कुमार रोज, निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, लाला लाजपतराय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार ने डॉ. देवेन्द्र सिंह के संपादन में **डोरेक्स ऑफसैट प्रिन्टर्स, हिसार** से लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार के लिए मुद्रित करवा कर जुलाई, 2022 को प्रकाशित किया।

निर्देश: इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है तथा लेखकों द्वारा पाठकों की जानकारी के लिए प्रस्तुत की गई हैं। सम्पादक, प्रकाशक व मुद्रक तथा लेखकों के द्वारा दी गई जानकारी के लिए उत्तरदायी नहीं हैं। ब्राँडेड दवाइयों व उत्पादों के नाम केवल उदाहरण के रूप में दिए हैं तथा इन्हें विश्वविद्यालय की ओर से सिफारिश न माना जाए। पाठकों को यह सलाह दी जाती है कि किसी भी जानकारी को प्रयोग में लाते समय विशेषज्ञों की सलाह लें। किसी भी त्रुटि के लिए सम्पादक से सम्पर्क किया जा सकता है। सभी विवादों का न्यायक्षेत्र हिसार न्यायालय होगा।

डॉ. विनोद कुमार वर्मा
कुलपति
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

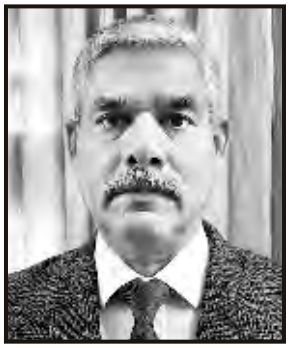

संदेश

हरियाणा कृषि प्रधान राज्य होने के साथ-साथ देश का अग्रणी पशुपालक राज्य भी है। कृषि एवं संलग्न क्षेत्रों में, पशुपालन क्षेत्र का आर्थिक विकास में योगदान सबसे ज्यादा है। आज के बदलते आर्थिक परिवेश में उच्च प्रोटीन युक्त आहार की मांग बढ़ रही है जिसे पूरा करने के लिए पशुपालन क्षेत्र पर निर्भरता बढ़ती जा रही है। साथ ही साथ किसानों की आय व आजीविका दोगुनी करने में भी पशुपालन क्षेत्र की अहम भूमिका है। बढ़ती जनसंख्या के कारण कम होती कृषि जोत ने पशुपालन को अत्याधिक प्रासंगिक बना दिया है।

हरियाणा राज्य देश के दुग्ध उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। इसके साथ-साथ मांस उत्पादन, अंडा उत्पादन, मछली पालन व पशुपालन से जुड़े अन्य व्यवसायों में भी काफी वृद्धि हो रही है।

लुवास अपने वैज्ञानिक शोधों के द्वारा हमेशा से पशुओं की उत्पादक क्षमता बढ़ाने, उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने और बीमारियों से बचाव जैसे विषयों पर नवीनतम जानकारियों एवं तकनीकों को पशुपालकों तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका वैज्ञानिकों, बुद्धिजीवियों एवं पशुपालकों को ज्ञान के माध्यम से जोड़ने का कार्य करती है। लुवास एवं अन्य क्षेत्रों में होने वाले पशुओं से संबंधित शोध कार्यों को विस्तार शिक्षा निदेशालय के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाने का कार्य किया जाता है। पशुधन ज्ञान पत्रिका के प्रकाशन के अवसर पर विस्तार शिक्षा निदेशक एवं पत्रिका के संपादक एवं वैज्ञानिकों को बधाई देता हूँ एवं आशा करता हूँ कि पत्रिका अपने उद्देश्य में सफल हो।

(विनोद कुमार वर्मा)

प्रो. (डॉ.) मनोज कुमार रोज
निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं
पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

संदेश

ग्रामीण क्षेत्रों में पशुपालन सामाजिक एवं आर्थिक बदलाव का महत्वपूर्ण अंग है। पशुपालन प्राचीन काल से ही हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। पशुधन हमें खाद्य उत्पादों के अलावा रोजगार तथा खेती के कार्यों के लिए ऊर्जा, खाद्य आदि उपलब्ध करवाता है। दुग्ध उत्पादन का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में गेहूँ, धान और गन्ना जैसे प्रमुख पदार्थों से भी ज्यादा हिस्सा है।

हरियाणा पूरे भारतवर्ष में दुग्ध उत्पादन में अग्रणी राज्यों में से एक है एवं प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता में पंजाब के बाद दूसरे स्थान पर है। पशुधन में उच्चतर उत्पादों की प्राप्ति के लिए संतुलित आहार, नस्ल सुधार, बेहतर स्वास्थ्य तथा बीमारियों का नवीनतम तकनीक द्वारा निदान और इलाज आदि ऐसे प्रांसगिक विषय हैं जिनकी जानकारी पशुपालकों तक समय-समय पर पहुंचाना अति आवश्यक है। राज्य में कुल दुग्ध उत्पादन का लगभग 84 प्रतिशत हमें भैंसों एवं 15 प्रतिशत गायों से प्राप्त होता है। राज्य एवं देश की बढ़ती जनसंख्या, खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार के प्रति जागरूकता को ध्यान में रखते हुए पशुपालन क्षेत्र में रोजगार की अपार संभावना है। ग्रामीण क्षेत्रों में युवाओं में डेयरी, मत्स्य पालन, सुअर पालन, मुर्गी पालन एवं भेड़-बकरी पालन में बढ़ती रूचि एवं रोजगार की संभावनाओं को ध्यान में रखकर विस्तार शिक्षा निदेशालय पशुधन के विकास से सम्बन्धित नवीन जानकारियों एवं तकनीकों को पशुधन ज्ञान पत्रिका के माध्यम से पशुपालकों तक पहुंचाने का कार्य करता है।

हरियाणा प्रदेश ने पशुपालन के क्षेत्र में बहुत तरक्की की है जिसमें प्रदेश के पशु वैज्ञानिकों और पशुपालक किसानों का बहुत बड़ा योगदान है। अब विस्तार शिक्षा निदेशालय द्वारा प्रकाशित 'पशुधन ज्ञान' पत्रिका का वर्ष 2020 का द्वितीय अंक पशुधन व पशु उत्पाद से संबंधित सूचनाएं और ज्ञान पशुपालकों के घर-घर तक पहुंचाने का कार्य करेगा। मैं विश्वविद्यालय के सभी वैज्ञानिकों और अधिकारियों का धन्यवाद करता हूँ एवं पशुपालकों के लिए किए जाने वाले इस प्रयास की सराहना करता हूँ।

(मनोज कुमार रोज)

सम्पादक की कलम से...

पशुपालक भाइयों आज के समय में पशुपालन एक उद्यम का रूप ले चुका है। पशु उत्पादों जैसे दूध, दही, लस्सी आदि की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसे में पशुपालक एक उद्यमी की तरह सोच रखकर पशुपालन व्यवसाय से अधिकतम लाभ ले सकते हैं। बदलते परिवेश में पशुओं में नए–नए प्रकार के रोग एवं समस्याएं हो रही है। ऐसे में हमें पशुपालन संबंधी नवीन जानकारी एवं तकनीकों के बारे में अवगत होते रहना चाहिए।

पशुपालकों को सरल एवं आसान भाषा में यह जानकारी पशुधन पत्रिका के माध्यम से दी जा रही है। हमारा उद्देश्य है कि पशुपालक पारंपरिक ज्ञान के साथ–साथ वैज्ञानिक विधि की भी जानकारी रखें एवं जरूरत पड़ने पर उसका उपयोग करें।

पशुधन ज्ञान की पत्रिका में पशुपालन में लाभदायक सिद्ध होने वाली हाइड्रोपोनिक्स, ड्रमसाइलेज जैसे आधुनिक जानकारियों से साथ–साथ मिलावटी दूध की पहचान, विभिन्न मौसमों में पशुओं की देखभाल, घातक बीमारियों से बचाव, गर्भकाल में पशुओं की देखभाल आदि विशयों पर बहुत सी नवीन जानकारी दी गई है। पशुपालकों से निवेदन है कि इसमें बताई गई दवाइयों से संबंधित जानकारी का उपयोग करने से पहले पशु चिकित्सक की सलाह अवश्य लें।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका पशुपालकों एवं अन्य बुद्धिजीवियों के लिए लाभप्रद सिद्ध होगी। मैं इस पुस्तिका के नवीन अंक के प्रकाशन पर कुलपति लुवास, विस्तार शिक्षा निदेशक, वैज्ञानिकगण एवं सम्पादक मंडल के सदस्यों का धन्यवाद ज्ञापन करता हूँ।

(देवेन्द्र सिंह)

विषय सूची

क्र.सं.	विषय	लेखक	पृष्ठांक
1.	मवेशियों में ढेलेदार त्वचा (लंपी स्किन डिजीज) रोग	वाचस्पति नारायण एवं अभिषेक गौरव	1
2.	डेयरी प्रसंस्करण यूनिट के लिए बैंक से ऋण प्राप्त करने की कार्यविधि	सतीश जाँगड़ा एवं सुषमा	3
3.	संकर हाथी घास–हरे चारे की बारहमासी फसल	सतपाल	6
4.	दुघारू पशुओं के बछड़े की देखभाल व प्रबंधन	आरुषी कंवर एवं मीनाक्षी विरमानी	9
5.	पशुओं में बाइपास प्रोटीन का महत्व	मीतू, रीतू, अनुज सिंह एवं ज्योत्सना	11
6.	कैसे करें गर्मियों के मौसम में मुर्गियों का प्रबन्धन?	मीतू, रीतू, अनुज सिंह एवं ज्योत्सना	13
7.	पशुओं में थनैला रोग एवं उसकी रोकथाम	सूदीप सोलंकी एवं दुर्गा गुर्जर	14
8.	बकरियों में होने वाली मुख्य बीमारियां	सूदीप सोलंकी एवं दुर्गा गुर्जर	16
9.	क्यासानूर वन रोग	विपुल ठाकुर, रमाकान्त एवं श्रिया रावत	19
10.	सुसंस्कृत मांस : मांस उद्योग का भविष्य	रितु रानी एवं संजय यादव	21
11.	डेयरी व्यवसाय में कोलोस्ट्रम फीडिंग का महत्व	अनु यादव, नेहा सिसौदिया, आशीष पंघाल एवं दिपिनचन्द्र यादव	22
12.	पशुओं में दूध निकलने का सही तरीका एवं दुग्धजनित बीमारियां	नरेंद्र सिंह एवं उपेन्द्र सिंह	25
13.	प्रतिकूल मौसम में पशुधन के रख–रखाव हेतू चारा प्रबंधन	सतपाल	27
14.	पशुओं की पहचान करने की विधियाँ	मनीषा सिंगोदिया एवं लोकेश टाक	30
15.	शूकर / सुअर उत्पादन क्षेत्र में जैव सुरक्षा उपाय के महत्व	लक्ष्मी कान्त एवं अनिल पाटीदार	32
16.	पशुओं में पीलिया (जॉन्डिस) रोग	राजेंद्र यादव, अमित सांगवान, पंकज कुमार एवं देवेंद्र सिंह	36
17.	भेड़ व बकरियों में काक्सीडियोसिस रोग (कुकड़िया रोग)	सुमनिल मारवाह, रिक्की झाम्भ, विनोद कुमार जैन	38
18.	सर्रा (ट्रिपानोसोमोसिस) : ऊँटों का एक प्रमुख रोग	सुमनिल मारवाह, काशीनाथ एवं रिक्की झाम्भ	39
19.	चूजों में सेक्सिंग प्रक्रिया	स्मृति शर्मा एवं रविंदर	41
20.	डेयरी पशु प्रबंधन	शिवेंद्र अग्रवाल एवं सरिता कौशल	44
21.	गाय, भैंस, भेड़, बकरी और सुअर पालकों के लिए मुँह–खुर रोग से संबंधित जानकारी	रितु पंघाल, अनिता दलाल, स्वाति दहिया	46

मवेशियों में ढेलेदार त्वचा (लंपी स्किन डिजीज) रोग

वाचस्पति नारायण* एवं अभिषेक गौरव

पशु चिकित्सा जैव रसायन विभाग, पशुजन स्वास्थ्य विभाग, पशुचिकित्सा और पशु विज्ञान महाविद्यालय
राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

ढेलेदार त्वचा रोग मवेशियों की एक संक्रामक घातक बीमारी है, जिसमें त्वचा और शरीर के अन्य भागों पर गांठें बनने लगती है। द्वितीयक जीवाणु संक्रमण अक्सर स्थिति को बढ़ा देता है। पशुओं को तेज बुखार आ जाता है और दुधारू पशु दूध देना कम कर देते हैं, मादा पशुओं का गर्भपात हो जाता है, कई बार तो पशुओं की मौत भी हो जाती है।

jkx dk dkj.k%

लंपी स्किन डिजीज (LSD) एक पशुरोग है जो 'कैप्रीपॉक्स वायरस' (Capripox virus), ढेलेदार त्वचा रोग वायरस (LSDV) के कारण होता है, जो Poxviridae family के भीतर जीनस Capri poxvirus (CaPV) का एक सदस्य है। ढेलेदार त्वचा रोग वायरस भेड़ पॉक्स वायरस (एसपीवी) और बकरी पॉक्स वायरस (जीटीपीवी) से निकट संबंधित हैं, लेकिन फाईलोजेनेटिक रूप से अलग हैं।

गांठदार त्वचा रोग महामारी रूप से प्रकट होता है। अक्सर, संक्रमण के नए केंद्र प्रारंभिक प्रकोप से दूर क्षेत्रों में दिखाई देते हैं। गीले गर्मी के मौसम में इसकी घटना सबसे अधिक होती है, लेकिन यह सर्दियों में हो भी सकती है। चूंकि रोग संक्रमित लार द्वारा प्रयोगात्मक रूप से संचरित किया जा सकता है, संपर्क संक्रमण भी संक्रमण का एक और संभावित मार्ग है। लंपी स्किन डिजीज का विषाणु किस तरह से पशुओं में संचरित होता है, इस संबंध में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। यह विषाणु मुख्यतः खून चूसने वाले कीट वाहकों, जैसे मच्छर, मक्खी तथा छोटे कीटों अथवा संदूषित सूइयों द्वारा संचारित होता है। संक्रमण के पश्चात यह विषाणु रक्त में 21 दिन तक, जबकि वीर्य (Semen) में 42 दिन तक विद्यमान रहता है।

i'kqvksa esa lØe.k%

वायरस का संचरण संक्रमित मवेशियों की गतिविधियों के माध्यम से होता है। संक्रमित जानवर की त्वचा और मुंह और नाक गुहाओं के श्लेष्म झिल्ली के साथ संक्रामक एलएसडीवी, ओकुलर डिस्चार्ज में उत्सर्जित करते हैं, जो साझा भोजन और पीने की जगहों को दूषित कर सकते हैं। ये दूषित पानी, लार और चारे के माध्यम से भी फैलता है। सामान्य स्थिर मक्खी (स्टोमोक्सिस कैल्सीट्रांस), एडीज एजिप्टी मच्छर, और राइपिसेफलस और एम्बलीओम्मा टिक की कुछ प्रजातिया एलएसडीवी का प्रसार करती है।

jksx ds lkekU; y{k.k%

1- **çkjfEHkd y{k.k&** लैक्रिमेशन और नाक से स्राव सबस्कैपुलर और प्रीफेमोरल लिम्फ नोड्स बढ़ जाते हैं और 10–50 मि.मी. व्यास के अत्यधिक विशिष्ट, गांठदार त्वचा के घावों की उपस्थिति आसानी से दिखाई देने योग्य होते हैं।

2- **rst cq[kkj ($>40.5^{0}$C)** लगभग एक सप्ताह तक बना रहता है।

3. दूध उत्पादन में तेज गिरावट, इसकी वजह से पशुओं में बुखार, अवसाद, थन से दूध गिरते रहना, पैरों में सूजन तथा लंगड़ापन इत्यादि की समस्या देखने को मिलती है। इसके चलते दुधारू पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता कम हो जाती है।

4. त्वचा की गांठें कई महीनों तक बनी रह सकती हैं। कभी–कभी, एक या दोनों आंखों के कॉर्निया में दर्दनाक अल्सरेटिव घाव विकसित हो जाते हैं, जिससे सबसे खराब स्थिति में अंधापन हो जाता है।

5. स्वयं वायरस या द्वितीयक जीवाणु संक्रमण के कारण होने वाला निमोनिया और थनैला।

jksx dh jksdFkke ,oa QkeZ ij esa fd;s tkus ;ksX; mik;%

- रोग की शुरूआत और प्रसार की सावधानीपूर्वक निगरानी फार्म स्तर पर की जानी चाहिए।
- झुंड में नए जानवरों का आगमन सीमित होना

*Corresponding author: harshvachaspati@gmail.com

चाहिए। नए जानवर के आगमन पर जांच की जानी चाहिए और नैदानिक संकेतों से मुक्त घोषित किया जाना चाहिए और उन्हें कम से कम 28 दिनों के लिए झुंड से अलग रखा जाना चाहिए।

- मवेशियों में रोग के वेक्टर संचरण के जोखिम को कम करने के लिए कीट विकर्षक के साथ नियमित रूप से इलाज किया जाना चाहिए और उनके आसपास रोगवाहकों की संख्या को कम करने के स्थायी जल स्रोत, घोल और खाद जैसे वेक्टर प्रजनन स्थलों को सीमित करना और जोतों में जल निकासी में सुधार करना टिकाऊ है, यह उपाय संचरण को पूरी तरह से रोक नहीं सकता है लेकिन जोखिम को कम कर सकता है।
- यदि संभव हो तो, संदिग्ध जानवर को बाकी झुंड से अलग करें। यदि संभव हो तो, बाकी जानवरों को खेत में खिलाकर और सांप्रदायिक चराई से बचकर पड़ोसी झुंड (झुंडों) से अलग कर दें।
- किसी भी सामान्य कीटाणुनाशक का उपयोग करके अपने हाथों, जूतों और पोशाक को 600 सेल्सियस पर धोकर कीटाणुरहित करें। वायरस का कोई इलाज नहीं होने के कारण टीकाकरण ही रोकथाम व नियंत्रण का सबसे प्रभावी साधन है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. **पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम**
2. **पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)**
3. **निःशुल्क SMS सेवा**
4. **पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री**
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

डेयरी प्रसंस्करण यूनिट के लिए बैंक से ऋण प्राप्त करने की कार्यविधि

सतीश जाँगड़ा[1]* एवं सुषमा[2]

[1]दुग्ध विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार
[2]कृषि व्यापार प्रबंधन विभाग, कृषि महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

डेयरी प्रसंस्करण संयंत्र उद्यमिता के अनेक अवसर प्रदान करता है। किसान अपना डेयरी संयंत्र लगाकर ना केवल स्वरोजगार शुरू कर अपनी आजीविका कमा सकता है अपितु अन्य लोगों के लिए भी रोजगार उपलब्ध करवा सकता है।

किसी भी उद्यम को शुरू करने के लिए 3 मुख्य वस्तुओं के आवश्यकता होती है अर्थात् कच्चा माल, पूंजी एवं तकनीकी ज्ञान। डेयरी प्रसंस्करण संयंत्र के लिए कच्चा माल मुख्यतः दूध है जो किसान अपने फार्म पर अथवा गाँव में ही अपने साथी किसानों से प्राप्त कर सकता है। तकनीकी ज्ञान किसान विभिन्न संस्थानों जैसे की लाल लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय (LUVAS) द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों से प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त भारत एवं राज्य सरकार की विभिन्न संस्थाओं द्वारा भी स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि कच्चा माल एवं तकनीकी ज्ञान किसान को आसानी से उपलब्ध हो सकता है। इसी क्रम में तीसरी वस्तु है पूंजी अर्थात् संयंत्र लगाने एवं चलाने के लिए आवश्यक धन राशि।

पूंजी किसी भी उद्यम को शुरू करने व कुशलपूर्वक चलाने के लिए अत्यावश्यक है। इस पूंजी के विभिन्न स्रोत हो सकते हैं जैसे कि स्वयं की बचत की हुई धनराशि, परिवार अथवा मित्रों से प्राप्त ऋण अथवा वित्तीय संस्थानों द्वारा दिया जाने वाला ऋण। जहां स्वयं की बचत धनराशि एवं परिवार अथवा मित्रों से प्राप्त ऋण अत्यधिक सुलभ हैं, यह उद्यम को शुरू करने एवं चलाने के लिए अपर्याप्त हो सकती है। ऐसी स्थिति में वित्तीय संस्थान एक बहुत ही सुलभ, कम कीमत वाला एवं आसानी से चुकाने योग्य पूंजी का स्रोत है।

यद्यपि बैंक एवं अन्य वित्तीय संस्थान पूंजी के सुगम एवं सुलभ स्रोत हैं, तथापि आम जन मानस को इनसे वित्तीय सहायता लेने में काफी कठिनाई का सामना करना पड़ता है। इसमे सबसे बड़ी बाधा है जनमानस का वित्तीय साक्षर ना होना। यदि कुछ महत्वपूर्ण बातों का ध्यान रखा जाए तो बैंक/वित्तीय संस्थान से सुगम एवं सुलभ पूंजी का साधन कोई भी नहीं है। वित्तीय संस्था से ऋण प्राप्त करने में वित्तीय साक्षरता काफी मददगार साबित हो सकती है। इस संबंध में वित्तीय ज्ञान को हम निम्न 6 चरणों मे समझ सकते हैं।

1. वित्तीय आवश्यकता का आकलन एवं प्रलेखन
2. उपयुक्त वित्तीय संस्थान का चयन
3. वित्तीय क्षमता/साख का प्रदर्शन
4. बैंक द्वारा ऋण स्वीकृति
5. ऋण का सही उपयोग
6. वित्तीय अनुशासन का पालन

foÙkh; vko';drk dk vkdyu o çyi[ku

सर्वप्रथम संयंत्र के स्थापन एवं कार्यवाही के लिए जरूरी पूंजी का आकलन किया जाना चाहिए। आकलन करने के पश्चात् इसका प्रलेखन भी जरूरी है ताकि वित्तीय संस्थान से ऋण लेते समय उसको प्रस्तुत किया जा सके। इस कार्य में प्रोजेक्ट के आकार और जरूरत अनुसार किसी पेशेवर की सहायता भी ली जा सकती है। इस आकलन में निम्न बिन्दुओं का विशेष तौर पर ध्यान रखना चाहिए।

1. संयंत्र में लगने वाले उपकरणों की कीमत और स्थापित करने का खर्च
2. जमीन एवं भवन की कीमत/जमा राशि/भाड़ा
3. विद्युत, पानी, सीवेज इत्यादि के लिए जमा राशि एवं कनेक्शन का खर्च
4. सरकारी लाइसेन्स फीस व अन्य शुल्क
5. उत्पादन कार्य शुरू होने के बाद आवश्यक कच्चा माल खरीदने व आवर्ती खर्चों के लिए कार्यशील पूंजी

*Corresponding author: satish.jangra@luvas.edu.in

6. किसी भी तात्कालिक आवश्यकता के लिए प्रावधान
7. विभिन्न सरकारी/गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा दिए जाने वाली सब्सिडी/आर्थिक सहायता
8. इस प्रकार होने वाले पूरे निवेश का आकलन एवं प्रलेखन कर लेना चाहिए। उसके पश्चात् पूंजी के विभिन्न स्रोतों का भी लेखा–जोखा तैयार कर लेना चाहिए। यह वित्तीय संस्थान से ऋण लेने में सहायक होगा। आमतौर पर वित्तीय संस्थान प्रोजेक्ट की कुल लागत का 75% ऋण के रूप में देते हैं। यह बात अचल पूंजी एवं कार्यशील पूंजी दोनों पर समान रूप से लागू होती है।

mfpr foÙkh; lLFkku dk p;u

एक बार यह ज्ञात हो जाने पर कि कुल कितने ऋण की आवश्यकता है, अगला पड़ाव वित्तीय संस्थान के चयन का है। वित्तीय संस्थान के चयन मे निम्न बातें अहम हैं।

1. अपने गाँव या शहर की, आपके घर/कार्यस्थल की सबसे नजदीकी बैंक शाखा का चयन करें।
2. जिस शाखा में आपका बचत खाता पहले से है उसको प्राथमिकता दें। यदि किसी बैंक शाखा/वित्तीय संस्थान से आपने ऋण लिया है और उसका पूर्ण भुगतान समयपूर्वक आपने किया है तो उसको प्राथमिकता दें।
3. वैसे तो वित्तीय संस्थान में बैंक, NBFC (गैर–बैंकिंग वित्तीय कंपनी/संस्थान) आदि अनेक संस्थान आते हैं। ऋण लेते समय ऋण मिलने की सुगमता एवं ब्याज दर दोनों का विशेष ध्यान रखें। इसके अतिरिक्त ऋण के प्रसंस्करण शुल्क, प्रलेखन शुल्क एवं आवर्ती खर्चों का भी ध्यान रखें।
4. वित्तीय संस्थान के चयन के पश्चात् उस शाखा में जाकर ऋण के लिए आवेदन करें।

foÙkh; {kerk@lk[k dk çn'kZu

1. शाखा में शाखा प्रबंधक अथवा ऋण अधिकारी/कृषि ऋण अधिकारी/फील्ड अधिकारी से मिलें। उन्हें अपने प्रोजैक्ट के बारे मे संक्षेप में बताएं।
2. अपना व्यवसाय से संबंधित लेनदेन जितना संभव हो बैंक खाते के माध्यम से ही करें। आपका बैंक के बचत खाते/व्यावसायिक लेन–देन, आपकी वित्तीय साख का प्रमाण होता है।
3. यदि अपने शाखा से अथवा कहीं और संस्थान से ऋण लिया है तो उसका पूरा ब्योरा और आपके ऋण व्यवहार का ब्योरा दें। यह आपकी वित्तीय क्षमता/साख मुख्य प्रमाण होता है।
4. यदि पूर्व में किसी कारणवश आपका ऋण व्यवहार खराब रहा है तो उसका कारण दस्तावेज के साथ बताएं। साथ ही आपके द्वारा उक्त व्यवहार को कैसे ठीक किया गया उसकी जानकारी दें।
5. किसी भी तरह की गलत जानकारी या बढ़ा–चढ़ा कर जानकारी न दें।
6. यदि आपने उद्यम से संबंधित कोई प्रशिक्षण प्राप्त किया है अथवा इस क्षेत्र में आपका अनुभव है तो उसका ब्योरा अवश्य दें। संबंधित दस्तावेज ऋण आवेदन के साथ लगाएं।

cld }kjk _.k Loh—fr

1. बैंक द्वारा ऋण अनुमोदित होने पर स्वीकृति पत्र दिया जाता है।
2. स्वीकृति पत्र को ध्यानपूर्वक पढ़ें व सभी नियम एवं शर्तें समझ लें। स्वीकृति पत्र में किसी प्रकार की संदेह अथवा त्रुटि होने पर शाखा प्रबंधक को तुरंत अवगत कराएं और इसे ठीक करवा लें।
3. सभी नियम एवं शर्तें को ध्यानपूर्वक विस्तार से समझ लें। संयंत्र की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण समयावली को अलग से नोट कर लें।
4. तत्पश्चात् बैंक द्वारा की जाने वाली सभी प्रलेखन एवं औपचारिकताएं पूर्ण करें।
5. यदि उद्यम पर किसी सरकारी/गैर–सरकारी विभाग/संस्था की सब्सिडी उपलब्ध है तो अपने बैंक के माध्यम से तुरंत आवेदन करें।

_.k dk mi;ksx

1. सभी औपचारिकताएं पूरी होने के बाद बैंक आपको ऋण का वितरण करेगा। इस दौरान समयावली का विशेष ध्यान रखें। जैसे की किसी उपकरण की खरीद समयावली में उल्लेखन के अनुसार समय पर करें।
2. प्रोजैक्ट में उल्लेखित उपकरण मूल्य का विशेष ध्यान रखे। यदि अपने किसी उपकरण का मूल्य 10000 रुपये दर्शाया है और अभी उसकी बाजार कीमत बढ़

कर 12000 रुपये है तो बैंक आपको 10000 रुपये के हिसाब से ही ऋण वितरित करेगा। बढ़ी हुई कीमत उद्यमी को ही अदा करनी पड़ेगी।

3. किसी उपकरण की कीमत घटने पर उसकी खरीद कम कीमत पर ही होगी एवं बैंक कम कीमत के हिसाब से ही ऋण वितरित करेगा।
4. ऋण वितरण के दौरान ध्यान रखे के किसी भी प्रकार से धन का विषयांतर (Diversion of funds) ना हो। बैंक जिस उपकरण/कार्य के लिए ऋण का वितरित करता है वह धन उसी कार्य में प्रयोग होना चाहिए।
5. सभी उपकरणों/सेवाओं के भुगतान करते समय बिल/रसीद लेकर उसको बैंक में जमा करें।
6. सरकारी/गैर–सरकारी विभाग/संस्था से मिलने वाली सब्सिडी/वित्तीय सहायता के लिए भी प्रलेखन साथ साथ करते रहें।

foÙkh; vuq'kklu dk ikyu

ऋण लेने के बाद आमतौर पर उद्यमी समझता है की अभी उसकी बैंक की सारी कार्यवाही पूर्ण हो गई है। परंतु उसे यह ध्यान देना चाहिए की बैंक के प्रति उसकी जिम्मेवारी ऋण के पूर्ण चुकता होने तक चलती रहेगी। इसमे निम्न बातों का विशेष ध्यान रखें –

1. बैंक ऋण की अदायगी, ऋण के स्वीकृति पत्र की शर्तों के हिसाब से समय पर करें। ऋण की अदायगी मे किसी तरह की भी चूक आपके वित्तीय अनुशासन में कमी को दर्शाता है।
2. बैंक द्वारा बताए गए सभी रिकार्ड जैसे बिक्री रजिस्टर, स्टॉक रजिस्टर इत्यादि को बनाकर रखे एवं समयानुसार इनमें लिखते रहें।
3. सरकारी/गैर–सरकारी विभाग/संस्था से मिलने वाली सब्सिडी/वित्तीय सहायता के संबंधित दस्तावेज अपने बैंक के माध्यम से जमा कर सब्सिडी/वित्तीय सहायता प्राप्त करें।
4. उद्यम से संबंधित सभी लेन–देन जहां तक संभव हो उद्यम बैंक खाते के द्वारा ही करें। यदि कभी यह संभव नहीं हो तो ऐसे लेन–देन की रसीद अवश्य बनाएं।
5. यदि किसी कारणवश उद्यम का कार्य अपेक्षित गति से नहीं चल पा रहा है और आप ऋण की अदायगी में परेशानी महसूस कर रहे हैं तो तुरंत बैंक से संपर्क करें। बैंक आपके पुराने रिकार्ड को देखते हुए कुछ समय के लिए ऋण भरने में छूट या आवश्यकता होने पर थोड़ा और ऋण भी प्रदान कर सकता है।
6. ऋण की अदायगी पूरी होने पर बैंक से ऋण पूर्ण अदा होने का प्रमाण पत्र (no dues certificate) अवश्य लें और हमेशा इसे संभाल कर रखें।
7. ध्यान रहे के ऋण की पूर्ण अदायगी के बाद भी उद्यम से संबंधित सभी लेन–देन उद्यम के खाते से ही करते रहें व पूर्ण रिकार्ड बनाकर रखें। इसका पालन करने पर आपको भविष्य में ऋण लेने में बहुत सुविधा होगी।

उपरोक्त सभी बातों का ध्यान रखने पर ऋण लेने में उद्यमी को सुगमता होगी। ध्यान रहे कि बैंक की आय ऋण देने से ही है। इसीलिए अच्छे ग्राहक की बैंक को हमेशा जरूरत रहती है। अपने जिम्मेदारीपूर्ण वित्तीय व्यवहार एवं नियमित प्रलेखन से आप बैंक के सामने अपनी अच्छी वित्तीय साख प्रस्तुत कर, बैंक के लिए एक अच्छे संभावित ऋण ग्राहक बन सकते हैं।

संकर हाथी घास–हरे चारे की बारहमासी फसल

सतपाल

चारा अनुभाग, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हमारे देश के प्रति पशु औसत दूध और मांस उत्पादन दुनिया की औसत उत्पादकता से 20–60 प्रतिशत कम है। इस कम उत्पादकता का मुख्य कारण पर्याप्त मात्रा में हरे चारे, सूखे चारे एवं रातिब का अभाव है। अगर हम पशुधन को पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक आहार देना चाहते हैं, तो हमें हरे चारे की साल भर की उपलब्धता सुनिश्चित करनी होगी। यह भी स्पष्ट है कि पशुधन क्षेत्र की सफलता मुख्य रूप से सस्ती कीमत पर चारा और चारा संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता पर निर्भर करती है। डेयरी फार्मिंग में, पोषण का कुल खर्च का लगभग 60 प्रतिशत होता है। इस प्रकार, डेयरी क्षेत्र की व्यवहार्यता के लिए उच्च पोषक मूल्य और बेहतर पाचन क्षमता के चारे व फीड महत्वपूर्ण है। पशुधन उत्पादन के विकास में तेजी लाने के लिए चारे की कमी एक प्रमुख बाधा है। दुनिया के लगभग 2.3 प्रतिशत भू–भाग के साथ भारत दुनिया के पशुधन की आबादी का लगभग 10.71 प्रतिशत का घर है, जो आने वाले वर्षों में लगभग 1.24 प्रतिशत की दर से बढ़ने की उम्मीद है। 2019 की पशुधन गणना के अनुसार भारत में 535.78 मिलियन पशु थे। हरियाणा अपनी पशुधन संपदा के लिए देश में एक बहुत ही प्रमुख स्थान रखता है। हरियाणा को हरियाना गाय और मुर्रा भैंस की प्रमुख नस्लों का जन्म स्थान होने का गौरव प्राप्त है। 2019 की पशुधन गणना के अनुसार हरियाणा में भैंस, भेड़, बकरी, घोड़े, टट्टू एवं कुल पशुधन की संख्या 2.92, 1.99, 0.69, 1.32 व 1.87 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। भैंसों के मामले में उच्चतम वृद्धि दर दर्शाती है कि किसान भारी निवेश करके, भैंसों की अधिक दूध देने की क्षमता व उपभोक्ता वरीयता के कारण इन दुधारू पशुओं का पालन–पोषण कर रहे हैं।

दूधारू पशुओं में अधिक दूध उत्पादन के लिए आवश्यक है कि पशुओं को पौष्टिक व संतुलित मात्रा में हरा चारा वर्ष भर मिलता रहे। वर्ष के कुछ महीनों में जैसे अक्तूबर–नवम्बर व मई–जून में हरे चारे की कमी आ जाने के कारण हम पशुओं के लिए हरा चारा पूर्ण मात्रा में नहीं दे पाते हैं जिसके फलस्वरूप पशुओं का स्वास्थ्य खराब हो जाता है एवं दूध उत्पादन में कमी आती है। पूर्ण वर्ष हरा चारा खिलाना काम लेने वाले पशुओं को भी जरूरी है। बारहमासी फसलों पर आधारित कुछ विशेष बहु–वर्षीय फसल चक्रों को लगाने से पौष्टिक व अधिक मात्रा में हरा चारा पूर्ण वर्ष मिलता रहता है।

संकर हाथी घास एक बारहमासी फसल है जोकि गर्म व नमी के महीनों, यानी मार्च से अक्टूबर के दौरान अधिकांश चारा पैदा करती है। संकर हाथी घास के बीज में अंकुरण की शक्ति नहीं होती है इसलिए इसे गन्ने की तरह प्रत्यारोपित किया जाता है। वानस्पतिक रूप से लगाई जाने वाली यह फसल, बाजरे की तरह घास जैसी, एक जबरदस्त चारा उपज देने वाली फसल है। यह व्यावहारिक रूप से किसी भी बीमारी या कीट से मुक्त है।

ldj gkFkh ?kkl dh mUur fdLe%

- **ufi;j ckt jk gkbfcM 21%** इस घास की यह किस्म पूरे भारत के लिए अनुशंसित है। हरे चारे की औसत पैदावार 600 से 720 क्विंटल प्रति एकड़ है।
- पी.बी.एन. 233% यह किस्म पूरे भारत के लिए अनुशंसित है। हरे चारे की औसत पैदावार 1200 से 1400 क्विंटल प्रति एकड़ है।
- पी.बी.एन. 346% यह किस्म पूरे भारत के लिए अनुशंसित है। हरे चारे की औसत पैदावार 700 से 800 क्विंटल प्रति एकड़ है।
- आई.जी.एफ.आर.आई–10% यह किस्म पूरे भारत के लिए अनुशंसित है। हरे चारे की औसत पैदावार 600 से 720 क्विंटल प्रति एकड़ है।

mUur lL; fØ;k;h

जलवायु: नेपियर बाजरा संकर गर्म मौसम की फसल है।

*Corresponding author: satpal_fpj@hau.ac.in

यह कुछ हद तक सूखे को सहन कर सकता है। यह उन क्षेत्रों में अच्छी तरह से बढ़ती है जहां औसत वार्षिक वर्षा 700 मि.मी. और तापमान 15 से 31 डिग्री सेल्सीयस हो। धूप के दिनों में बूंदाबांदी के साथ इसके चारे की उपज बढ़ जाती है। इसे कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता होती है।

feêh vkj mldh r¦;kjh% नेपियर घास मिट्टी से अधिक मात्रा में पोषक तत्वों को निकालती है। घास बेहतर जल निकासी वाली मिट्टी, उच्च उर्वरता वाली दोमट मिट्टी बेहतर होती है। यह घास अपेक्षाकृत कम पीएच मिट्टी से न्यूट्रल पीएच मिट्टी (5.5 से 7.0) में अच्छा प्रदर्शन करती है। एक बार स्थापना के बाद यह घास 3 से 5 वर्ष तक हरा चारा देती है। बेहतर रोपाई के लिए मिट्टी पलटने वाले हल और तीन क्रॉस हैरोइंग से एक जुताई करके मिट्टी तैयार करें। हर साल कुदाल से गुड़ाई करें ताकि मृत कल्लों को हटाया जा सके, खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सके और मिट्टी में हवा का बेहतर संचार हो सके।

jksi.k fof/k% यह घास बीज नहीं बनाती है इसलिए इसे वानस्पतिक रूप से जड़ या तना कटिंग द्वारा रोपित किया जाता है। प्रति एकड़ लगभग 8900 रूट स्टॉक या स्टेम कटिंग (2–3 कलियों के साथ लगभग 50 सेमी लंबा) लगाया जाता है सेट का आधा हिस्सा हवा में रहने दिया जाता है जबकि शेष भाग मिट्टी में दबा दिया जाता है। रोपाई के लिए कटिंग को कुदाल की सहायता से 45 डिग्री के कोण पर मिट्टी में दबाना चाहिए। इसे पंक्ति से पंक्ति 75 सेमी और पौधे से पौधे 60 सेमी की दूरी पर लगाया जाना चाहिए।

jksikbZ dk le;% इसे मार्च से सितंबर तक गर्म मौसम के दौरान लगाया जा सकता है। हालांकि, रोपण के लिए सबसे अच्छा समय मार्च है या मानसून के आगमन के साथ।

moZjd çca/ku% इस फसल को काफी मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। रोपाई से दो से तीन सप्ताह पहले अच्छी तरह से तैयार गोबर की खाद 10 टन प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। रोपाई के समय 20 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ डालें। इसके अलावा प्रत्येक कटाई के बाद दूसरे वर्ष में 12 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ डालें। प्रत्येक कटाई के बाद दूसरे वर्ष में 20 किग्रा नाइट्रोजन प्रति एकड़ डालें।

flapkbZ çca/ku% इसे बार–बार सिंचाई की जरूरत होती है। गर्म और शुष्क महीनों के दौरान 10 से 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जा सकती है। मानसून के दौरान खेत में पानी के ठहराव से बचना चाहिए।

[kjirokj çca/ku% प्रत्येक कटाई के बाद गुडाई करनी चाहिए ताकि मिट्टी ढीली, भुरभुरी और खरपतवारों से मुक्त रहे।

dVkbZ çca/ku% एक बार रोपाई के बाद, यह घास 3 से 5 साल तक प्रति वर्ष 6–8 कटिंग देने में सक्षम है। रोपण के लगभग दो महीने बाद पहली कटाई तैयार हो जाती है। यह बढ़ते मौसम के दौरान हर 45 दिनों के बाद बाद की कटाई के लिए तैयार है। सर्दियों के महीनों में वृद्धि की दर बहुत धीमी हो जाती है जब ठंड बहुत गंभीर होती है, लेकिन गर्म होते ही फिर से अंकुरित होने लगती है। यह फसल एक वर्ष में लगभग 600 क्विंटल प्रति एकड़ पैदावार देती है।

ladj gkFkh ?kkl vk/kkfjr cgq&o"khZ; Qly pØ

हरियाणा के जिन क्षेत्रों में पानी की कमी नहीं है वहां निम्न फसल चक्र अपनाएं।

1- ladj gkFkh ?kkl $ ykfc;k ¼xfeZ;ka eas½ $ ykfc;k ¼[kjhQ½& बरसीम + चाइनीज सरसों

संकर हाथी घास एक बहुवर्षीय फसल है। इसे मध्य फरवरी से मध्य मार्च में जड़ों व तनों द्वारा लगाया जाता है। इसके लिए हाथी घास की 3500 जड़ों की प्रति एकड़ जरूरत पड़ती है। हाथी घास के लिए लाइनों का फासला दो मीटर तथा पौधों का फासला 60 से.मी. रखना चाहिए। अप्रैल के अन्त में जब बरसीम से चारा मिलना बन्द हो जाता है तो उस समय हाथी घास चारा देना आरम्भ कर देती है। गर्मियों के महीनों (मई–जून) में इसकी पौष्टिकता बढ़ाने के लिए इसकी लाइनों के बीच में लोबिया की बिजाई करनी चाहिए। इसके लिए लोबिया के 16 किलो प्रति एकड बीज की मात्रा की जरूरत पड़ती है। अक्तूबर के महीने में हाथी घास की आखिरी कटाई लेकर इसकी लाइनों के बीच में बरसीम + चाइनीज सरसों की बिजाई कर लेनी चाहिए। सर्दियों के मौसम में जब संकर हाथी घास चारा नहीं देती तब बरसीम की फसल से चारा मिलना शुरू हो जाता है। मार्च में संकर हाथी घास का फुटान शुरू हो जाता है। उसके बाद अप्रैल में चारा मिलना शुरू हो जाता है। इस फसल चक्र से पूरे साल में 720–800 क्विंटल प्रति एकड़

हरा चारा प्राप्त होता है।

2- lidj gkFkh ?kkl $ fjtdk

संकर हाथी घास की तरह रिजका भी एक बहुवर्षीय फसल है। मध्य फरवरी से मध्य मार्च के महीने में संकर हाथी घास की जड़ों को दो मीटर के अन्तर पर लगाया जाता है। संकर हाथी घास लगाने के तीन महीने बाद चारा मिलना शुरू हो जाता है। रिजका की अक्तूबर अन्त से मध्य नवम्बर तक 30 से.मी. (एक फुट) की दूरी पर लाइनों में बिजाई करें। रिजका के लिए 4 किलो बीज प्रति एकड़ पर्याप्त रहता है।

fofHkUu Qly pØksa esa pkjs dh iSnkokj

क्रमांक	फसल चक्र	हरा चारा (क्विं./ एकड़)	शुष्क पदार्थ (क्विं./ एकड़)	अपरिष्कृत प्रोटीन (क्विं./ एकड़)
1.	संकर हाथी घास +लोबिया+लोबिया–बरसीम+चाइनीज सरसों	720–800	152–168	6.72
2.	संकर हाथी घास + रिजका	560–640	114–126	5.88

हरे चारे की मांग और उपलब्धता के बीच के अंतर को कम करने के लिए उन्नत किस्मों के बीजों/रोपण सामग्री के प्रयोग व हरे चारे की अधिक उपज दने किस्मों की आवश्यकता है। हरा चारा उत्पादन साल भर सुनिश्चित करने के लिए, किसानों को निम्नलिखित कृषि पद्धतियों को अपनाने की आवश्यकता है :

- हमेशा चारा फसलों की किस्मों की उन्नत व उच्च उपज वाले प्रमाणित/ट्रूथफूली लेबल वाले बीज/रोपण सामग्री का प्रयोग करें।
- चारे की खेती के लिए अनुशंसित पैकेज का पालन करें जैसे भूमि की तैयारी, समय पर बुवाई, उर्वरक प्रबंधन, सिंचाई, खरपतवार और कीट नियंत्रण व कटाई प्रबंधन।
- बहु–कटाई वाली चारा फसलों से अधिक उत्पादन व गुणवत्तापूर्ण चारा प्राप्त करने के लिए नियमित अंतराल (30 से 45 दिन) पर जमीनी स्तर से 10 सें. मी. की ऊंचाई से काटें।
- खेतों में हाइब्रिड नेपियर घास जैसी उच्च उपज देने वाली बहु–कटाई बारहमासी चारा फसल की खेती व अन्य फसल क्षेत्रों की मेड़ों पर भी कर सकते हैं।

दुघारू पशुओं के बछड़े की देखभाल व प्रबंधन

आरूषी कंवर एवं मीनाक्षी विरमानी

पशु शरीर क्रिया विज्ञान एवं जैव रसायन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

हमें बछड़ों को अच्छा भोजन व प्रबंधन देना चाहिए ताकि वह भली–भांति बड़े व प्रतिस्थापन भंडार के लिए इस्तेमाल किए जा सके। जन्म से पहले ही बछड़े को ध्यान रखना शुरू हो जाता है। गर्भवती या बांध गाय को बछड़े के जन्म से 6–8 हफ्ते पहले से सूखा रखना चाहिए और उचित मात्रा में भोजन की खुराक देना चाहिए। कमजोर बांध गाय कमजोर और छोटे बछड़े को जन्म देगी।

'kq: vkrh çcU/ku

- जन्म के तुरंत बाद बछड़े के नाक व मुंह से किसी भी प्रकार की बलगम या कब को हटा देना चाहिए। सामान्य तौर पर गाय अपने बछड़े को तुरंत चाट कर जन्म के बाद साफ कर देती है। इस से बछड़ा पूर्ण रूप से सूख जाता है व उसके शरीर में खून का प्रसार सामान्य रूप से होने लगता है। यदि गाय ऐसा न करें या मौसम सर्द हो तो बछड़े को सूखे कपड़े या बोरी से पूरी तरह पोछ कर सुखा देना चाहिए। बछड़े को दबाव व विश्राम विधि द्वारा छाती दबाकर कृत्रिम सांस देनी चाहिए।
- बछड़े के शरीर से 2–5 सेंटीमीटर दूर नेवल को बांधना चाहिए और लिगेचर से लगभग 1 सेंटीमीटर नीचे काटना चाहिए। उसके बाद कटे स्थान पर टिंक्चर आयोडीन, बोरिक एसिड या किसी एंटीबायोटिक का लेप करना चाहिए।
- बछड़े के जन्म स्थान से गिला बिछौना हटाकर उसकी जगह को स्वच्छ व सूखा कर देना चाहिए।
- बछड़े का वजन कर लेना चाहिए।
- गाय के थन व निपल्स को क्लोरीन घोल के साथ साफ करने के पश्चात् सुखा लेना चाहिए। बछड़े को अपनी माता का प्रथम दूध यानी कोलोस्ट्रम पी लेने देना चाहिए।
- जन्म के 1 घंटे के अंदर ही बछड़ा स्वयं अपने पैरों पर खड़े होने का प्रयास करता है। यदि वह अत्यधिक कमजोर है तो उसे खड़े होने में मदद करनी चाहिए।

cNMk dk Hkkstu

- बछड़े को पहले 3 दिनों तक कोलोस्ट्रम यानी माता के प्रथम दूध का सेवन करने देना चाहिए। कोलोस्ट्रम गाढ़ा और चिपचिपा होता है। इसमें अत्यधिक मात्रा में विटामिन–ए पाया जाता है जो पशुओं के प्रबंधन व स्वास्थ्य के लिए उत्तम होता है। कोलोस्ट्रम में प्रतिरोधक प्रोटीन ग्लोब्युलिन पाया जाता है जो बछड़े को बीमारियों से बचाता है। कोलोस्ट्रम मैं एंटी ट्रिप्सिन पाया जाता है जो कि पेट में इम्यूनो ग्लोबिन का पाचन होने से रोकता है और ज्यों का त्यों सोख लेता है।
- पूरा दूध 3 दिन बाद दिया जाना चाहिए। बेहतर है बछड़े को थन या बाल्टी से पीना सिखाया जाए। दिन में दो बार आहार दिया जाना चाहिए जो कि शरीर के तापमान के अनुरूप हो। कमजोर बछड़ों को दिन में तीन बार खुराक दी जानी चाहिए।
- बछड़े को दी जाने वाली खुराक की अधिकतम मात्रा उसके शरीर के 10% भार के अनुसार होनी चाहिए। तरल दूध की मात्रा अधिकतर 5 से 6 लीटर प्रतिदिन, लगभग 6 से 10 हफ्ते तक दी जानी चाहिए। अत्यधिक दूध के खुराक के कारण बछड़े को काफ सकाउरस की बीमारी हो सकती है। इसीलिए बछड़े को पूरे दूध के बजाय दूसरी खुराक दी जानी चाहिए।
- बछड़े को शुरूआती खुराक एक महीने के बाद शुरू की जानी चाहिए।
- बछड़े को अच्छी गुणवत्ता का चारा और भूसा चार महीने के बाद दिया जाना चाहिए।
- एंटी बायोटिक्स जैसे कि औरयूमायसीन और टेरामाइसिन

*Corresponding author: arukanwar15@gmail.com

बछड़े की भूख को बढ़ाता है, तेजी से शरीर में वृद्धि करता है व काफ सकाउरस से बचाव रखने में मददगार सिद्ध होता है।

çcl/ku dh vU; ;qfDr;k¡

- बछड़े की पहचान जन्म के समय कान पर गोंदकर की जानी चाहिए। इसे ब्राड़िंग कहते हैं और यह जन्म के एक साल के अंदर करनी चाहिए।
- जन्म के 7 से 10 दिन के अंदर लाल गर्म लोहे, कास्टिक पोटाश छड़ी या बिजली विधि से बछड़े के सींग उतार देने चाहिए।
- 30 दिन के अंतराल में परजीवी क्रीमी देकर पेट के कीड़ों का समापन किया जाना चाहिए।
- 2–3 हफ्ते के बाद ताजा जल दिया जाना चाहिए।
- बछड़ों को 3 महीने तक अलग से रखा जाना चाहिए तथा उसके बाद झुंड में रखा जाना चाहिए। 6 महीने के पश्चात् बछड़े और बछियों को अलग से रखना चाहिए।
- बछड़ों की वृद्धि दर जानने के लिए 6 महीने तक हर हफ्ते उनका वजन किया जाना चाहिए। उसके पश्चात् हर एक महीने बाद वजन किया जाना चाहिए।
- किसी भी प्रकार की खनिज की कमी ना हो इसलिए बछड़ों को चाटने के लिए खनिज ब्लॉक दिए जाने चाहिए।
- बच्चे को मां के दूध से हटाकर ठोस आहार पर डाल देना चाहिए।
- शुरूआती महीने में निमोनिया, डायरिया व कृमि के कारण बछड़ों की मृत्यु दर अधिक होती है। इससे बचने के लिए बछड़े को गर्म व साफ स्थान पर रखना चाहिए।
- यदि चार से अधिक थन हो तो इसे एक या दो महीने में ही हटा देना चाहिए।
- 8 से 9 हफ्ते के बछड़े का प्रजनन अंग काट देना चाहिए।
- फंगल इन्फेक्शन से बचने के लिए शरीर को साफ व सूखा रखना चाहिए।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

पशुओं में बाइपास प्रोटीन का महत्व

मीतू, रीतू, अनुज सिंह एवं ज्योत्सना*

पशु आहार एवं पोषण विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

गाय, भैंस, भेड़ और बकरी जुगाली करने वाले पशुओं की श्रेणी में आते हैं। इन पशुओं में चार पेट होते हैं। सबसे पहले खाद्य पदार्थ रूमेन में जीवाणु द्वारा किण्वित होते हैं। ये जीवाणु भूसे और हरे चारे को पचाने में सहायक होते हैं। परन्तु इस प्रक्रिया में 60–70 प्रतिशत प्रोटीन अमोनिया में परिवर्तित हो जाता है। जीवाणुओं की इस गतिविधि की वजह से प्रोटीन और स्टार्च का उपयोग पूरी तरह से नहीं हो पाता। इस वजह से जानवर की जरूरतें पूरी नहीं हो पाती। खासकर दुधारू व छोटे पशुओं में, जहाँ पोशक तत्वों की अधिक आवश्यकता है इस किण्वित गतिविधि से बचाने के लिए हम फीड में ऊपरी बदलाव कर सकते हैं ताकि वो रूमेन को बाइपास करके सीधा आंत के निचले हिस्से में उपलब्ध हो सके।

साथ ही भारत में जानवरों की संख्या में बढ़ोतरी की तुलना में उपलब्ध गुणवत्ता वाले चारे की कमी है। इसलिए मौजूद खाद्य पदार्थों को समझदारी से उपयोग करके इस समस्या से बचा जा सकता है।

वैसे तो विभिन्न बाईपास पोषक तत्व होते हैं, जैसे :–

1. बाइपास प्रोटीन
2. बाइपास स्टार्च
3. बाइपास वसा

इनके उपयोग से पशुओं में अपने शारीरिक विकास और दुग्ध उत्पादन के लिए प्रोटीन और ऊर्जा के उपयोग की क्षमता बढ़ जाती है।

ckbikl ikVhu

जुगाली करने वाले पशुओं में दो स्तरों पर प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

1- :eu MhxMcy ikVhu& प्रोटीन का ये हिस्सा जीवाणुओं द्वारा रूमेन में तोड़ा जाता है और प्रमाणस्वरूप अमोनिया का उत्पादन होता है। यह हिस्सा जीवाणुओं के प्रोटीन की जरूरत को पूरा करता है।

2- :eu ljf{kr ikVhu& यह हिस्सा रूमेन से बचकर आंत के निचले हिस्से में पचता है। माइक्रोबियल प्रोटीन के साथ–साथ बाइपास प्रोटीन पशुओं के एमिनो एसिड की जरूरतों को पूरा करता है इसलिए अधिक उत्पादन वाले पशुओं या बछड़ों के खाने में इसकी मात्रा अधिक होनी चाहिए। मक्के से निर्मित ग्लुटन मील, फिश मील, कपास बीज खल तथा मक्का अनाज बाइपास प्रोटीन के अच्छे प्राकृतिक श्रोत है। सोयाबीन मील, अलसी की खल, बिना तेल राइस ब्रेन तथा लियुसीन लीफ मील मध्यम प्रोटीन डीग्रेडेबिलिटि के श्रोत हैं। जबकि सरसों की खल, सीड खल और मूंगफली की खल अत्यधिक रूमेन डीग्रेडेबल अथवा कम बाइपास प्रोटीन के श्रोत है।

ikVhu dk ljf{kr djus dh rjhds

1- Å"ek mipkj& विभिन्न प्रकार के आहार पर उचित तापमान का प्रयोग करके प्रोटीन को संरक्षित किया जा सकता है। जैसे की मूंगफली और सोयाबीन खल को 2 घण्टों के लिए 150 डिग्री तापमान पर उपचार करने से प्रभावी रूप से संरक्षित किया जा सकता है।

2- jklk;fud mipkj& फॉर्मेल्डिहाइड, टैनिन, ग्लूट्रेलडीहाइड, ग्लाइओक्सल, हैक्समीथाइलिन जैसे पदार्थों के उपयोग से प्रोटीन को संरक्षित किया जा सकता है। इनमें से फॉर्मेल्डिहाइड सबसे आम उपचारों में से एक है। यह प्रोटीन की घुलनशीलता को प्रभावित करता है। सरसों और मूँगफली की खल के उपचार के लिए 1.2 ग्राम फारमैल्डीहाइड प्रति 100 ग्राम क्रूड प्रोटीन के स्तर पर बिना किसी प्रतिकूल प्रभाव के प्रोटीन के रूमेन में टूटने की क्षमता कम कर देता है।

3- ikVhu dk dlyhdj.k& यह प्रक्रिया आमतौर पर उच्च मूल्य वाले प्रोटीन के लिए उपयोग की

*Corresponding author: jyotsana3khyalia@gmail.com

जाती है। इसमें प्रोटीन को लिपिड/फैटी एसिड या कार्बोनेट, काओलिन, लेसथिन, ग्लूकोज और अन्य योजक के संयोजन के साथ कैप्सूल के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है जिससे प्रोटीन रूमेन में टूटने से बच जाता है।

4- ,feuk ,flM dk lj{k.k& आजकल संरक्षित एमिनो एसिड खाद्‌य योजक के रूप में पशु आहार में प्रयोग किए जाते हैं। इनको संरक्षित करने के लिए कैप्सूलीकरण प्रक्रिया का प्रयोग किया जा सकता है। मेथियोनाइन हाइड्रोक्सी, एन–एसिटिल–डीएल मेथियोनिन, डीएल–होमोसिस्टीन और अन्य एनालॉग का प्रयोग किया जा सकता है।

fdu i'kqvk esa ckbikl ikVhu dh t:jr gkrh g

1. रोजाना 15 किलोग्राम से अधिक दूध देने वाले दुधारू पशुओं में
2. रोजाना 1 किलोग्राम वजन से बढ़ रहे बछड़ों में
3. केवल कम गुणवत्ता वाले भूसे पर पल रहे पशुओं में

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. निःशुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्‌य सामग्री
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

कैसे करें गर्मियों के मौसम में मुर्गियों का प्रबन्धन?

मीतू, रीतू, अनुज सिंह एवं ज्योत्सना*

पशु आहार एवं पोषण विज्ञान विभाग

लाला लाजपत राय पशुचिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)

मुर्गियों का स्वास्थ्य तथा विकास मौसम के चरम में काफी प्रभावित होता है क्योंकि ये पर्यावरण तापमान के प्रति संवेदनशील है। मुर्गियों की पूरी उत्पादकता लेने के लिए इन्हें 18–21 डिग्री सेल्सियस तापमान देना चाहिए परन्तु देखने में यह आता है कि यह आदर्श तापमान केवल सर्दियों के मौसम में ही प्राप्त किया जा सकता है। परन्तु गर्मियों के मौसम में तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है, जिससे कि मुर्गियों के विकास दर अथवा अण्डा उत्पादन पर बहुत बुरा असर होता है व कुक्कुट पालक को आर्थिक नुकसान होता है। कुक्कुटपालन में हीट स्ट्रोक के परिणामस्वरूप पक्षियों में उपलब्ध खनिजों की कमी हो जाती है। इस कारण पोल्ट्री पक्षियों में एसिडोसिस की स्थिति उत्पन्न होने लगती है। लेकिन निम्नलिखित उपायों द्वारा उचित प्रबन्धन करके उच्च पर्यावरण तापमान का प्रतिकूल प्रभाव काफी हद तक दूर किया जा सकता है।

1. मुर्गी फार्म की छत का सही तरीके से प्रबन्धन करके अन्दर का तापमान 5–100 सेल्सियस से कम किया जा सकता है। छत से ऊपर 6 इंच की फूस की परत डाल सकते हैं। छत के ऊपर सफेद रंग तथा छत के नीचे काला रंग करना भी फायदेमंद होता है।
2. छत की ऊँचाई को बढ़ाकर आवास का तापमान कम किया जा सकता है।
3. सूर्य का प्रकाश तथा बारिश का पानी के सीधे आवाहन को रोकने के लिए घर के ऊपर 3 फूट का छज्जा जरूर बनाएँ जिससे पानी अन्दर न जाए।
4. सूर्य की सीधी किरणों को रोकने के लिए आवास की लम्बाई हमेशा पूर्व से पश्चिम दिशा में रखें।
5. पोल्ट्री आवास में छत के ऊपर (फव्वारा) तथा आवास के अन्दर धूमन का प्रयोग करके गर्मी से होने वाले असर को 100 सें.मी. तक कम किया जा सकता है।
6. पक्षी अधिक तापमान में अपने श्वांस को तेज करके गर्मी के प्रभाव को कम करने लगते हैं जिससे उनमें पानी की कमी हो जाती है क्योंकि इनके अंदर कोई पसीने की ग्रथियां नहीं होती। मुर्गियों में इसलिए गर्मियों के दिनों में ताजा, स्वच्छ एवं ठंडा पानी पूरी मात्रा में उपलब्ध रहना चाहिए।
7. मुर्गियों के आवास की चौड़ाई 25 फुट से अधिक नहीं होनी चाहिए। अगर चौड़ाई इससे ज्यादा है तो रिज वेंटीलेशन अवश्य प्रदान करें। गर्मियों में गर्म हवाओं को कम करने के लिए तथा तेज हवाओं के बीच में बाध्य उत्पन्न होने के लिए ऐसे छायादार पेड़ लगाने चाहिए जिन पर पक्षी घोंसला न बना पाएँ।
8. मुर्गियों को कम तापमान के समय दाना देना चाहिए साथ ही साथ गर्मियों के दौरान खाने की मात्रा को प्रोत्साहित करने के लिए दाने में 10 प्रतिशत ऊर्जा की मात्रा कम कर देनी चाहिए।
9. गर्मियों में मुर्गियों की संख्या प्रति वर्ग फुट कम कर देनी चाहिए जिससे कि मुर्गियां पंख फैलाकर शरीर के तापमान को सही रख सकें।
10. बिछावन पर पाली जाने वाली मुर्गियों के बिछावन को समयनुसार बदलते रहना चाहिए क्योंकि गीला बिछावन और इसकी मोटी परत अधिक गर्मी उत्पन्न करती है और साथ ही इसकी मोटाई भी कम कर दें।
11. मुर्गी फार्म पर किये जाने वाले कार्य जैसे कि मुर्गी वैक्सीनेसन या कोई दवाई देनी है या उन्हें एक घर से दूसरे घर में बदलना तो ये कार्य ठंडे समय में ही करें तथा प्रकाश व्यवस्था भी ज्यादा गर्मी तथा तीव्रता की नहीं होनी चाहिए।
12. पोटाशियम क्लोराइड मुर्गियों में गर्मी के तनाव को कम करने में मदद करता है इसलिए पानी के माध्यम से 0.48 प्रतिशत देने से गर्मी का तनाव कम किया जा सकता है।
13. सोडियम बाइकार्बोनेट खिलाने के मुर्गियों में कोई लाभ है जिनमें से एक यह है कि ये हीट का खतरा काम करता है। मुर्गियों के दाने में 1 किलो प्रति एक टन की मात्रा से मिलाने पर हीट स्ट्रोक का खतरा कम हो जाता है साथ ही अण्डों के छिलकों की सतह भी मजबूत हो जाती है।
14. इलेक्ट्रोलाइट्स, एस्कोर्बिक एसिड एवं सोडियम सैलिसिलेट जैसे रासायन भी पानी तथा दाने में मिलाकर गर्म मौसम को झेलने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

*Corresponding author: jyotsana3khyalia@gmail.com

पशुओं में थनैला रोग एवं उसकी रोकथाम

सुदीप सोलंकी* एवं दुर्गा गुर्जर

पशुचिकित्सा महाविद्यालय, नवानियां, उदयपुर

थनैला रोग का अर्थ दूध देने वाले पशु के अयन एवं थन की सूजन तथा दूध की मात्रा एवं रासायनिक संगठन में अन्तर आना होता है। अयन में सूजन, अयन का गर्म होना एवं अयन का रंग हल्का लाल होना इस रोग की प्रमुख पहचान है। दूध निकालने पर दूध के साथ रक्त भी आता है जिससे दूध का रंग हल्का लाल हो जाता है। दो या तीन दिन बाद इससे दूध आना बन्द हो जाता है और अगर दूध निकलता भी है तो इसके साथ–साथ दूध के छिछड़े भी निकलते है। पशु को हल्का बुखार भी रहने लगता है। लगभग एक सप्ताह बाद थन काफी बड़ा हो जाता है और अगर उचित चिकित्सा न हो तो अयन सूख जाता और थन मारा जाता है। थनैला रोग विश्व के सभी भागों में माया जाता हैं। इससे दुग्ध उत्पादन का ह्रास होता हे। दुग्ध उघेग को भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। थनैला रोग जीवाणुओं, विषाणुओं, प्रोटोजोवा आदि के संक्रमण से होता है। संक्रमण के दोरान कई कारक स्वतः ही दूध में आ जाते हैं। उक्त दूध को मनुष्यों द्धारा उपयोग करने पर कई बीमारियां हो सकती हैं। इस कारण यह रोग और भी हानिकारक हो जाता है।

mipkj ,oa jksdFkke%

- बीमारी पशु के अयन एवं थन की सफाई रखनी चाहिए।
- बीमारी की जांच शुरू के समय में ही करानी चाहिए।
- थन या अयन के उपर किसी भी प्रकार के गर्म पानी, तेल या घी की मालिश नहीं करनी चाहिए।
- दूध निकालने से पहले एवं बाद में किसी एन्टीसेप्टिक लोशन से धुलाई करनी चाहिए।
- अधिक दूध देने वाले पशुओं को थनैला रोग का टीका लगवाना चाहिए।
- कभी–कभी बच्चों के दूध पीते समय थनों पर दांत लग जाते हैं उस पर बोरिक मलहम जेनसियन वायलेट क्रीम या हिमैकस–डी लगाना चाहिए।
- पशु में बीमारी होने पर तत्काल निकट के पशु चिकित्सालय से सम्पर्क कर उचित सलाह लेना चाहिए।

n/kk: i'kq ls lEcfU/kr lko/kkfu;k%

- दूध देने वाला पशु स्वस्थ होना चाहिए। टी.बी., थनैला इत्यादि बीमारियां नहीं होनी चाहिए। पशु की जांच समय पर पशु चिकित्सक से कराते रहना चाहिए।
- दूध दुहने से पहले पशु के शरीर की अच्छी तरह सफाई कर लेना चाहिए। दुहाई से पहले पशु के शरीर पर खरैरा करके चिपका हुआ गोबर, धूल, कीचड, घास आदि साफ कर लेनी चाहिए। खास तौर पर पशु के शरीर के पिछले हिस्से, पेट, अयन, पूंछ व पेट के निचले हिस्से की सफाई रखनी चाहिए।
- दुहाई से पहले अयन की सफाई का ध्यान रखना चाहिए। अयन एवं थनों को किसी जीवाणु नाशक घोल से धोया जाए तथा घोल से भीगे हुए कपड़े से पोंछ लिया जाए।
- यदि किसी थन में बीमारी हो तो उससे दूध निकाल कर फेंक देना चाहिए।
- दुहाई से पहले प्रत्येक थन की दो चार बूदं की धारें जमीन पर गिरा देना चाहिए या बर्तन में इकट्ठा कर लेना चाहिए।

n/kk: i'kq dks ck/kus ds LFkku ls lEcfU/kr lko/kkfu;k%

- पशु बांधने का व खड़े होने का स्थान पर्याप्त होना चाहिए।
- फर्श यदि सम्भव हो तो पककी होनी चाहिए, यदि पक्की नहीं हो सके तो कच्ची फर्श समतल हो तथा उसमें गड्ढे इत्यादि न हों। मूत्र व पानी निकालने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- दूध दुहने से पहले पशु के चारों ओर सफाई कर लेनी चाहिए। गोबर, मूत्र हटा देना चाहिए। यदि बिछावन

*Corresponding author: sudeepdrsolanki@gmail.com

बिछाया है तो दुहाई से पहले उसे हटा लेना चाहिए।

- दूध निकालने वाले स्थान की दीवारे, छत आदि साफ होनी चाहिए। उनकी चूने की पुताई करवा लेनी चाहिए तथा फर्श की फिनाइल से धुलाई दो घण्टे पहले ही कर लेनी चाहिए।

n/k d crlu l lEcfU/kr lko/kkfu;k%

दूध दुहने का बर्तन साफ होनी चाहिए। उसकी सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। दूध के बर्तन को पहले ठण्डे पानी से फिर सोडा या अन्य जीवाणुनाशक रसायन से मिले पानी से फिर सादे खोलते हुए पानी से धोकर धूप में, चूल्हे के उपर उल्टी रखकर सूखा लेना चाहिए। साफ किये हुए बर्तन पर मच्छर, मक्खियों को नहीं बैठने देना चाहिए।

दुध दुहने के बर्तन का मुंह चोडा व सीधा आसमान मे खुलने वाला नहीं होना चाहिए क्योकि इससे मिट्टी, धूल, आदी के कण व घास फुस के तिनके, बाल आदि सीधे दुहाई के समय बर्तन में बिर जायगे इसलिए बर्तन संकरे मुंह वाले एंव टेढा होना चाहिए।

बर्तन पर जोंड व कोने कम से कम होने चाहिए।

LoPN n\X/k mRiknu%

- पशु का दुहान नियमित रूप से निश्चिय समय पर करें।
- दुहान से पूर्व जनन अंगों एवं अयन को लाल दवायुक्त पोटेशियम परमैगनेट पानी से साफ करें।
- दुहान का बर्तन उपर से आधा तिरछा/ढका हुआ हो।
- दुहान निरोग व्यक्ति द्धारा हाथों को साबुन से स्वच्छ कर लाल दवा से धोकर किया जाये।
- दुहान के समय शान्ति का माहौल हो अथवा हल्का संगीत बजाने से अधिक दुग्ध उत्पादन मिलता है।
- दुहान का कार्य शीघ्रता से एक बार मे पूरा करना चाहिए।
- दुग्ध की प्रारम्भिक धार प्रयोग में नहीं लानी चाहिए। उसे फेंक देना चाहिए।
- गर्मियों में दिन में एक बार पशु को नहलायें एवं अधिक दुग्ध उत्पाद प्राप्त करें।
- दुहान के समय गंध वाला आहार न खिलायें ग्वालों को इत्र का प्रयोग नहीं करना चाहिए अन्यथा दूध में गंध आ जायेगी।

बकरियों में होने वाली मुख्य बीमारियां

सूदीप सोलकी* एवं दुर्गा गुर्जर

पशुचिकित्सा महाविद्यालय, नवानियां, उदयपुर

QMfd ;k

बकरियों की यह एक प्रमुख बीमारी है जो अधिकतर वर्षा ऋतु में फैलती है। एक साथ रेवड़ में अधिक बकरियां रखने, आहार में अचानक परिवर्तन तथा अधिक प्रोटीनयुक्त हरा चारा खा लेने से यह रोग तीव्रता से बढ़ता है।

यह रोग क्लोस्ट्रीडियम परफिजेन्स नामक जीवाणु के विश के कारण पैदा होता है। साधारणतः इस बीमारी में आफरा हो जाता है। अधिक ध्यान से देखने पर बकरी के अंगों में फड़कन (कम्पन) सी दिखाई देती है। इसी कारण इस रोग को फड़किया कहते हैं। इस रोग में पशु लक्षण प्रकट करने के 3–4 घंटे में मर जाता है। पेट में दर्द के कारण बकरी पिछले पैरों को पेट पर मारती है तथा सुस्त होकर मर जाती है। यही रोग का प्रमुख लक्षण है।

cdjh&pPkd ¼ekrk½ %

यह एक विषाणुजनित रोग है जो रोगी बकरी के सम्पर्क में आने से फैलता है। इस रोग में बकरी शरीर के ऊपर दाने निकल आते है। बीमार बकरियों को बुखार हो जाता है साथ ही कान, नाक, थनों व शरीर के अन्य भागों पर गोल–गोल लाल रंग के चकते हो जाते हैं जो फफोले का रूप लेकर अन्त में फूट कर घाव बन जाते हैं। बकरी चारा खाना कम कर देती है तथा उसका उत्पादन कम हो जाता है। कहीं पर यदि पानी रखा हो तो पशु अपना मुंह पानी में डालकर रखता है।

रोग के प्रकोप से बचने के लिए प्रतिवर्ष वर्षा से पहले रोग–प्रतिरोधक टीके लगवाने चाहिए। बीमारी होने पर प्रतिजैविक दवाइयों का प्रयोग करना चाहिए। जिससें दूसरे प्रकार के कीटाणुओं के प्रकोप को रोका जा सके। बीमार पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए तथा रोगी पशु के बिछौने तथा खाने से बची सामग्री और मृत पशु को जलाकर या जमीन में गाड़ देना चाहिए।

*Corresponding author: sudeepdrsolanki@gmail.com

[kj idk&eqgidk jksx %

यह बकरियों का एक संक्रामक रोग हैं। यह रोग वर्षा ऋतु के आने के बाद आरंभ होता है। इस रोग में बकरियों के मुंह व खुर में छाले पड़ जाते हैं तथा मुंह से लार टपकती रहती है और बकरी इससे चारा नहीं खा पाती है। पैरों में जख्म हो जाने से बकरियां लंगड़ाकर चलने लगती है। चारा न खा पाने से बकरियां कमजोर हो जाती है। जिससे इनमें मृत्यु दर बढ़ जाती है तथा इनका शारीरिक भार व उत्पादन भी कम हो जाता है।

इस रोग के विषाणु रोगी पशुओं के संपर्क से संक्रमित आहार व जल के ग्रहण करने से स्वस्थ बकरियों में प्रवेश करते हैं। इस रोग से प्रभावित बकरियों के अंगों को लाल दवा के घोल से धोना चाहिए। छालों पर मुख्य रूप से ग्लिसरीन लगाने से लाभ रहता है। वर्षा ऋतु से पहले बसंत के आरंभ में बकरियों को पोलीवेलेन्ट टीका लगा देना चाहिए। अतः रोगी पशुओं को स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए तथा स्वस्थ होने के बाद ही समूह में वापस रखना चाहिए।

U;ekfu;k jksx %

इसे फेफड़े का रोग भी कहते हैं। बकरियों में श्वास संबंधी बीमारी या न्यूमोनिया रोग प्रायः अधिक मात्रा में होता है। इस रोग में पशु के फेफड़ों व श्वसन तंत्र में सूजन आ जाती है जिससे उनके श्वास लेने में कठिनाई आती है। इस रोग के कारण बकरियों तथा उनके बच्चों में मृत्यु दर अधिक होती है। यह रोग जीवाणु व विषाणु दोनों के प्रभाव से पनप सकता है। लेकिन पाश्च्युरेल्ला हीमोलिटीका नामक जीवाणु इस रोग को फैलाने में काफी सक्रिय माना जाता है। ठण्डे तथा प्रतिकूल मौसम के कारण यह रोग अति तीव्रता से फैलता है। बकरी को तेज बुखार आता है तथा मुंह–नाक से तरल स्त्राव निकलता है। बकरी खाना–पीना छोड़ देती है तथा समूह से अलग खड़ी रहती है।

छोटे बच्चों को यह रोग विशेष रूप से प्रभावित करता

है। न्यूमोनिया एक श्वास रोग होने के कारण इसके रोगी पशु के सूंघने व छींकने मात्र से इसके कीटाणु स्वस्थ पशु में चले जाते हैं। यदि बकरियों में जीवाणुओं द्वारा न्यूमोनिया का जल्दी ही पता चल जाएं तो प्रतिजैविक दवाइयों से इस रोग का निदान हो सकता है। विषाणुजनित रोग में प्रतिजैविक दवाइयां देने दूसरे सामान्य जीवाणुओं को बढ़ने से रोका जा सकता है। पाश्च्युरेल्ला से जनित न्यूमोनिया में स्ट्रेप्टोसिलीन व एम्पीसिलीन 3–4 दिन देने से अधिक लाभ होता है। माइक्रोप्लाज्मा जनित न्यूमोनिया में आक्सीटेट्रासाइक्लिन काफी उपयोगी है। बकरियों के आवास व वातावरण का उचित प्रबंध करने से व पूर्ण आहार देने से रोग की संभावनाएं कम हो जाती है। बकरियों व बच्चों को अधिक ठण्ड व वर्षा से बचाने का उपाय करना चाहिए। बीमार बकरी को अलग रखकर उपचार करना चाहिए।

tkWl jksx %

इस रोग का प्रमुख लक्षण बकरी का दिन–ब–दिन कमजोर होना व उसकी हड्डियां दिखाई देना है। यह रोग रोगी बकरी के संपर्क में आने से फैलता है। इस बीमारी के लिए कोई विशेष टीका उपलब्ध नहीं है तथा अंत में बकरी मर जाती है। यह एक जानलेवा बीमारी है। जिस रेवड़ में यह फैल जाती है, धीरे–धीरे उस रेवड़ को समाप्त कर देती है। इसलिए जैसे ही इस बीमारी से ग्रस्त पशु दिखाई दे, उसे तुरन्त खत्म कर देना चाहिए। रेवड़ में अधिक भीड़ नहीं होने देनी चाहिए।

thok.k&xHkikr %

जो बकरी एक बार अपना बच्चा गिरा देती है वह बकरी पशुपालक के लिए अगले बच्चे तक भार बन जाती है, जिससे बकरी–पालक को आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। गर्भपात एक संक्रामक रोग है। ब्रुसेल्लोसिस, सालमोनेल्लोसिस, विब्रियोसिस एवं क्लेमाइडियोसिस आदि इस रोग के मुख्य कारण है। रोगी बकरी से जीवाणु मूत्र, गोबर, प्लेसेन्टा आदि द्वारा बाहर निकलते हैं तथा स्त्राव से सने हुए चारे को खाने, योनि को चाटने आदि ही कई कारणों से पशु बार–बार बच्चा गिराता है। रोगी बकरी के संपर्क द्वारा यह रोग बकरों के जननेन्द्रियों को प्रभावित करके रोगग्रस्त कर देता है। जो कि इस रोग के संवाहक बन जाते हैं। रोगग्रस्त बकरी में मुख्य लक्षण गर्भपात होना है। गर्भपात होने से पूर्व योनि में सूजन आ जाती है, बादामी रंग का स्त्राव निकलता है व थन सूज कर लाल हो जाता है।

इस बीमारी के ईलाज व रोकथाम के लिए रोगी पशु को एकदम अलग कर देना चाहिए। इनके बाड़े को साफ रखना चाहिए। रोगी बकरी के पिछले भाग को कीटनाशक दवाइयों से साफ करते रहना चाहिए तथा योनि में भी फुरियाबोलस व हेबेटीन पैसरी आदि रखनी चाहिए। उचित निदान के बाद रोगग्रस्त मादा को समूह में नहीं रखना चाहिए एवं न ही प्रजनन में काम में लेना चाहिए।

[kjxyu jksx %

बकरियों में वर्षा से सर्दियों तक होने वाला यह प्रमुख रोग है। यह रोग स्प्रेफोरस, नेफ्रोफोरस नामक जीवाणु से पैदा होता है। मुख्य रूप से यह रोग गीली मिट्टी व वर्षा ऋतु में अधिकता से फैलता है। इस रोग में बकरी एक या अधिक पैरों से लंगडाकर चलती है। जिससे बकरी ठीक से चल नहीं पाती व धीरे–धीरे कमजोर हो जाती है। इसमें खुरों के बीच का मांस व खाल सड़कर मुलायम पड़ जाता है तथा अजीब सी दुर्गन्ध आती है।

इस रोग से बचाव के लिए बाड़े के दरवाजे पर पैर स्नान (फुट बाथ) बनाकर नीला थोथा आदि दवा के घोल में करीबन 5 मिनट तक पशु को खड़ा कर उसके बाद चरने भेजना चाहिए। खुर के बीच के घाव को ठीक से साफ कर दस प्रतिशत नीला थोथा या पांच प्रतिशत फार्मलिन से धोने पर आराम मिलता है तथा रोग का प्रकोप भी कम हो जाता है। इस रोग से बचाव के लिए पशुओं को गीले चरागाह में चरने के लिए नहीं भेजना चाहिए। खुरों के बढ़े हुए भाग को काटकर निकालते रहना चाहिए।

vkQjk %

यह बकरियों में मुख्य रूप से पाया जाने वाला रोग है। इसमें गैसों के बनने व एकत्रित होने से पेट फुल जाता है। यह रोग अधिकतर वर्षा व उसके बाद में जरूरत से अधिक हरा चारा, सड़ा हुआ व फंफूदयुक्त चारा खा लेने से होता है। इससे अधिक गैस बनती है व हो जाती है। कई बार बहुत सी बीमारियों की वजह से पशु बहुत समय तक एक ही करवट लेटा रहता है तब उसकी पाचन क्रिया सही ढंग से नहीं हो पाती है। जिससे पेट में गैस एकत्रित होकर इस रोग का कारण बनती है।

पेट में बनी गैसे शरीर से बाहर न निकलने पर अंदर के अन्य भागों में दबाव डालती है जिससे मुख्य रूप से फेफड़े प्रभावित होते हैं तथा पशु को श्वास लेने में परेशानी होती है। पशु काफी बेचैन हो जाता है व बायीं ओर का भाग फुल जाता है। यदि पेट पर हल्के हाथ से मारे तो ढप–ढप की आवाज आती है। पशु के मुंह से झाग आने लगते है तथा दर्द के कारण पेट पर लात मारता है। समय पर उपचार न होने पर बकरी की मृत्यु भी हो जाती है।

आफरा की पहचान होने पर पशु चिकित्स्क को बुलाकर ट्रोकार कैन्युला की सहायता से पेट की गैसें निकाल दें। बकरी की आगे की टांगें ऊंचाई पर रखकर धीरे–धीरे पेट की मालिश करें जिससे गैस पेट से बाहर निकल जाती है तथा फेफड़ों पर दबाव कम पड़ता है। पशु को तारपीन का तेल 10–15 ग्राम, हींग 2 ग्राम व अलसी का तेल 70 ग्राम मिलाकर पिलाने से लाभ मिलता है। पिलाते वक्त ध्यान रखे कि तेल फेफडों में न जाएं।

बकरियों को हरा व भीगा चारा अकेले नहीं खिलाना चाहिए। आफरा से बचने के लिए पशुओं को सड़ा–गला चारा व अधिक मात्रा में दाना नहीं खिलाना चाहिए।

nLr %

यह रोग मुख्य रूप से बच्चो में 2–3 सप्ताह में होता है। इस रोग का मुख्य रोगकारक ई. कोलाई नामक जीवाणु होता है। बच्चों में इस रोग के कारण बुखार आ जाता है व तेज दस्त हो जाते हैं तथा खाना–पीना छोड़ देते हैं। इस रोग से बचाव के लिए बच्चों को शुरू में दिन में 3–4 बार आवश्यकतानुसार खींस पिलाना चाहिए। जिससे उनमें रोग–प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। इस रोग में प्रतिजैविक दवाइयां जैसे डाइजीन के नियोमाइसिन व सेप्ट्रोन इत्यादि लाभदायक सिद्ध हुई हैं।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

क्यासानूर वन रोग

विपुल ठाकुर*, रमाकान्त एवं श्रिया रावत

पशु चिकित्सा महाविद्यालय, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ-250110 (उ.प्र.)

क्यासानूर वन रोग एक विषाणु जनित रोग है तथा सबसे पहले क्यासानूर कर्नाटक के जंगलों में पाया गया था। इसे मंकी फीवर या बंदर बुखार भी कहा जाता है, क्योंकि यह जंगली बंदरों की मौत से जुड़ा हुआ है। यह एक चिचड़ी–जनित रक्तस्रावी वायरल रोग है, जो मनुष्यों और अन्य प्राइमेट के लिए घातक हो सकता है। क्यासानूर वन रोग के वायरस की पहचान 1957 में भारत देश के कर्नाटक (पूर्व में मैसूर) राज्य के क्यासानूर वन के एक बीमार बंदर से किया गया था।

jksx dk dkj.k %

- यह रोग क्यासानूर वन रोग वायरस (केएफडीवी) के कारण होता है।
- यह वायरस फ्लैविविरिडे परिवार का सदस्य है।
- हार्ड टिक्स (हेमाफिसालिस स्पिनिगेरा) केएफडी वायरस का रिजर्वायर है और एक बार संक्रमित होने पर पूरा जीवन भर संक्रमित रहता है।
- संक्रमित हार्ड टिक्स के काटे जाने के बाद रोडेन्टस (मूषक) छछूंदर और बंदर आमतौर पर होस्ट (अतिथेय) होते हैं। केएफडीवी प्राइमेट में मृत्यु का कारण बन सकते हैं।

Hkkjr esa çHkkfor jkT; % यह रोग प्रथम बार कर्नाटक के शिमोगा जिले से पाया गया था। यह रोग कर्नाटक के अन्य जिलों में फैल गया जिसमें चिक्कमंगलोर, उत्तर कन्नड़, दक्षिण कन्नड़, उडुपी चामराज नगर (2012), बेलगावी (2016) जिले शामिल हैं। तमिलनाडु राज्य के नीलगिरी जिले से बंदरों के शव परीक्षण में साल 2013 केएफडीवी का पता चला था। कर्नाटक की सीमा से लगे तीन पड़ोसी राज्यों जैसे वायनाड (2013) और केरल के मलरंपुरम जिलों (2014) गोवा राज्य के उत्तरी गोवा जिला (2015) और महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग जिले (2016) से बंदरों की मौत और मनुष्यों के संक्रमित होने के मामले सामने आए।

*Corresponding author: vipulthakur29153@gmail.com

jksx dk Qyko dh rjhdk %

- मनुष्यों में यह रोग हार्ड टिक्स के काटने या संक्रमित जानवर के संपर्क में आने से हो सकता है।
- मंकी फीवर एक वेक्टर जनित बीमारी है, जो मुख्य रूप से बंदरों और मनुष्यों को प्रभावित करती है। क्यासानूर वायरस की पहचान वर्ष 1957 में की गई थी।
- केएफडीवी से प्रभावित होने वाले 5–10 प्रतिशत लोगों में रक्तस्त्रावी लक्षण विकसित होते और उनकी मृत्यु हो जाती है।
- इससे सबसे अधिक प्रभावित लोग वन समुदायों में रहने वाले होते हैं।
- बकरियां, गाय और भेड़ जैसे बड़े जानवर केएफडी से संक्रमित हो सकते हैं, परन्तु बीमारी के संचरण में सीमित भूमिका निभाते हैं।
- केएफडी से संक्रमित पशु टिक्स के लिए रक्त भोजन प्रदान करते हैं और वायरेमिया युक्त जानवरों के लिए अन्य टिक्स को संक्रमित करना संभव है। लेकिन इन जानवरों से मनुष्य के लिए के एफडीवी का संचरण अत्यन्त मुश्किल है।

jksx dk y{k.k %

- 3 से 8 दिन के इनक्यूबेशन पीरियड के बाद केएफडी के लक्षण जैसे अचानक ठंड लगना, बुखार और सिर दर्द के साथ शुरू होते हैं।
- मांसपेशियों में दर्द, उल्टी, पाचन तंत्र संबंधित लक्षण और रक्त स्राव की समस्या प्रारंभिक लक्षण शुरू होने के 3 से 4 दिन बाद हो सकती है।
- रोग से संक्रमित मरीजों में असामान्य रूप से निम्न रक्तचाप और कम प्लेटलेट, लाल रक्त कोशिका और सफेद रक्त कोशिकाओं की संख्या पाई जाती

है। एक से दो सप्ताह के लक्षणों के बाद कुछ रोगी बिना किसी जटिलता के ठीक हो जाते हैं।

- कुछ रोगी तीसरे सप्ताह की शुरूआत में लक्षणों की दूसरी लहर से भी पीड़ित हो सकते हैं।
- इन लक्षणों में बुखार और तंत्रिका तंत्र संबंधित लक्षण दिखाई पड़ सकते हैं, जैसे गंभीर सिर दर्द, मानसिक गड़बड़ी, कपकपी और आंखों द्वारा देखे जाने देखने में समस्या हो सकती है।
- केएफडी के लिए अनुमानित मृत्यु दर 3 से 5 प्रतिशत तक हो सकती है।

jksx dk funku%

- बीमारी के प्रारंभिक चरण में प्रयोगशाला में रक्त से वायरस को अलग करके या पीसीआर विधि का उपयोग करके बीमारी का पता लगाया जा सकता है।
- एलिसा का प्रयोग भी इस रोग की के जांच के लिए किया जा सकता है।

jksx dk mipkj%

- क्यासानूर वन रोग का कोई कारगर इलाज उपलब्ध नहीं है।
- परंतु बीमारी के शुरूआती अवस्था में मरीज को अस्पताल में भर्ती करके उसको सपोरटिव इलाज कराना चाहिए।
- मरीजों को आवश्यकतानुसार फ्लूयड थेरीपी करनी चाहिए जिससे मरीज के शरीर की हाइड्रेशन ठीक बना रहे।
- इसके अलावा रक्त स्राव विकारों का ठीक करने का उचित इलाज करना चाहिए।

cpko dk mik;%

- इस रोग से बचने के लिए टीका लगवाना चाहिए।
- इसके अलावा कीट निवारक दवा का प्रयोग करना चाहिए।
- उन क्षेत्रों में सुरक्षात्मक कपड़े पहनना चाहिए जहां पीर टिक्स की संख्या ज्यादा होती है।
- हाई टिक्स के काटने या संक्रमित जानवरों के संपर्क में आने से बचना चाहिए।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

सुसंस्कृत मांसः मांस उद्योग का भविष्य

रितु रानी[1]* एवं संजय यादव[2]

[1]पशुपालन एवं डेयरी विभाग, हरियाणा, [2]पशुधन उत्पाद प्रौद्योगिकी विभाग,
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

सुसंस्कृत मांस

सुसंस्कृत मांस (जिसे प्रयोगशाला–विकसित या खेती वाले मांस के रूप में भी कहा जाता है) दर्द रहित तरिके से एक जीवित जानवर से मांसपेशियों की कोशिकाओं की कटाई कर और फिर प्रयोगशाला में इन कोशिकाओं को उगाने के द्वारा बनाया जाता है। यह जैविक रूप से बिल्कुल मांस ऊतक है, लेकिन यहां मुख्य बात यह है कि इसमें जानवरों को मारने की आवश्यकता नहीं है जैसा कि पारम्परिक तरीकों में किया जाता है। कुछ उद्योग विशेषज्ञों के अनुसार यह प्रक्रिया, जिसे सेलुलर कृषि कहा जाता है, भविष्य की लहर है।

संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) का अनुमान है कि अगले 40 वर्षों में मांस की मांग में दो तिहाई से अधिक की वृद्धि होने जा रही है और वर्तमान उत्पादन के तरीके उस मांग को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। निकट भविष्य में दोनों मांस और अंय मुख्य खाद्य पदार्थों के लिए महंगी लक्जरी आइटम बनने जा रहे हैं, तो वर्तमान में कृषि क्षेत्र को धन्यवाद् जो हमारी सभी मांगों को पूरी कर रहा है जब तक की हमें कोई और विकल्प नहीं मिल जाता।

पशुधन मीथेन (एक ग्रीनहाउस गैस जो कार्बन–डाइ–ऑक्साइड की तुलना में 20 गुना अधिक शक्तिशाली है) के अनियंत्रित उत्पादन से ग्लोबल वार्मिंग में योगदान देता है। मांस की मांग में वृद्धि से मीथेन, कार्बन–डाइ–ऑक्साइड और नाइट्रस ऑक्साइड के स्तर में काफी वृद्धि होगी और जैव विविधता का नुकसान होगा। इसलिए सुसंस्कृत मांस की संभावना एक बेहतर विकल्प है।

सुसंस्कृत मांस कैसे उगाया जाता है

विश्व की पहली सेल आधारित मांस कंपनी 'मेम्फिस मीट' थी जिसके लिए बिल गेट्स और रिचर्ड ब्रैनसन जैसे दूरदर्शी द्वारा वित्तीय सहायता प्रदान की गई थी। विश्व स्तर पर नीदरलैंड, अमेरिका, इज़राइल और सिंगापुर अब संयंत्र आधारित और स्वच्छ मांस दोनों का उत्पादन कर रहे हैं। सेल आधारित मांस श्रेणी में अनुसंधान और विकास पर केंद्रित दुनिया के पहले अनुसंधान केंद्र की घोषणा महाराष्ट्र में की गई है, जो 2020 तक खुलेगा।

इसलिए लैब में उगाए जाने वाले मांस को बनाने के लिए वैज्ञानिक किसी जानवर से स्टेम सेल, तथाकथित बिल्डिंग ब्लॉक सेल लेते हैं। वे कोशिकाओं को पोषक तत्वों वाले तरल में स्नान कराते हैं ताकि उन्हें डुप्लीकेशन में मदद मिल सके और उन्हें एक बायोरिएक्टर (बढ़ते जीवों के लिए एक प्रयोगशाला उपकरण) में डाल दिया जाता है।

एक बार 'असंरचित' मांस विकसित होने के बाद सोया प्रोटीन, जिलेटिन, या अन्य स्रोतों से बने 'मचान' का उपयोग प्रयोगशाला में उगाए गए मांस को आकार देने के लिए किया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया में आमतौर पर 2 से 8 सप्ताह लगते हैं।

पोषण के बारे में

खराब गुणवत्ता वाले मांस की खपत पुरानी बीमारी का कारण बन सकती है। लेकिन जैसा कि वैज्ञानिक सुसंस्कृत मांस में वसा और कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को समायोजित कर सकते हैं, तो सच शब्दों में, प्रयोगशाला उगाये मांस का समग्र पोषण पर क्या प्रभाव हो सकता है विज्ञान भी इस बारे में अब तक स्पष्ट नहीं है।

सुसंस्कृत मांस के लाभ

प्रयोगशाला में उगाए गए मांस के कुछ स्पष्ट लाभों में शामिल हैं–

- **कम संदूषण:** मांस विशेषज्ञों का कहना है कि प्रयोगशाला में उगाए जाने वाले मांस में ई–कोलाई बैक्टीरिया (जो पशु के पेट में रहता है) और अन्य

*Corresponding author: reetunimbiwal@gmail.com

संदूषकों से संक्रमित होने की संभावना बहुत कम होती है।

- **tkuojk d fy, dY;k.k&** सुसंस्कृत मांस के लिए शरीर के सिर्फ एक उत्तक की आवश्यकता होती है इसलिए पूरे जानवर को नहीं मारना पड़ता।
- **de i;kZoj.kh; çHkko&** जैसे–जैसे मांस की वैश्विक मांग बढ़ती है, अधिक से अधिक वन भूमि रैंच और फसल क्षेत्रों में परिवर्तित हो जाती है। इसके अलावा, सुसंस्कृत मांस के लिए बहुत कम भूमि की आवश्यकता होती है, कम पानी का उपयोग होता है और कम प्रदूषण पैदा होता है। पारंपरिक मांस उत्पादन मीथेन, कार्बन डाइ ऑक्साइड, और नाइट्रस ऑक्साइड, तथाकथित ग्रीनहाउस गैसों को बढ़ावा देता है। प्रयोगशाला में उगाया मांस इन उत्सर्जनों को काफी कम कर सकता है। यह अनुमान लगाया गया है कि पारंपरिक बीफ की तुलना में, सेल आधारित मांस भूमि उपयोग को 95% से अधिक, जलवायु परिवर्तन उत्सर्जन को 74% से 87% और पोषक तत्व आधारित प्रदूषण को 94% तक कम करता है।

fpark,¡ & जबकि सुसंस्कृत मांस एक आशाजनक भविष्य है, लेकिन इसकी कुछ दिक्क़तें भी हैं –

यह शाकाहारी नहीं है– प्रयोगशाला में उगाये गए माँस में भी कोशिकाएं शामिल है इसलिए शाकाहारी इसको किस तरिके से स्वीकार करेंगे ये भी एक चिंता का विषय है। इसके अलावा, हिंदू, मुस्लिम, और यहूदी धर्मों के कई सदस्यों को यकीन है कि सुसंस्कृत मांस अपने धर्मों के आहार कानूनों के साथ मैच नहीं सकता है।

क्या लोग इसे खरीदेंगे? कुछ लोगों के लिए प्रयोगशाला में विकसित मांस स्वादिष्ट नहीं है। इसलिए लोग इसे खरीदेंगे भी या नहीं इसकी कोई गारंटी नहीं है।

fu"d"kZ

उपर्युक्त तथ्यों का विश्लेषण करके हम कह सकते हैं कि सेलुलर कृषि संभवतः पशुधन में सुधार करने का अवसर प्रदान करती है और यह क्षेत्र मांस उद्योग के जलवायु प्रभाव को दूर कर सकता है, किसानों की आय को बढ़ा सकता है, कुपोषण से लड़ सकता है और अरबों जानवरों की जान बचा सकता है। इसलिए अब आवश्यकता है कि अब हम लोग इसका समर्थन करे।

डेयरी व्यवसाय में कोलोस्ट्रम फीडिंग का महत्व

अनु यादव[1], नेहा सिसौदिया[2], आशीष पंघाल[2] एवं दिपिन चन्द्र यादव[2]*

[1]पशु चिकित्सा विज्ञान विभाग, [2]पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

कोलोस्ट्रम या पहला दूध नवजात के जन्म के बाद स्तन ग्रंथि के प्रारंभिक स्राव में उत्पन्न होता है। कोलोस्ट्रम को आमतौर पर पूरे दूध से अलग किया जाता है क्योंकि इसमें इम्युनोग्लोबुलिन की उच्च सांद्रता होती है जिसे एंटीबॉडी के रूप में जाना जाता है। एंटीबॉडी प्रोटीन होते हैं जो पशुओं में रोग पैदा करने वाले रोगजनकों की पहचान करने और उन्हें नष्ट करने का कार्य करते हैं। कोलोस्ट्रम विकास कारकों और प्रोटीन, वसा, दूध शर्करा, विटामिन और खनिजों जैसे पोषक तत्वों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

dkykLVe D;ksa egRoiw.kZ gS\

- पशुओं में गर्भावस्था के दौरान प्लेसेंटा के माध्यम से भ्रूण में मातृ एंटीबॉडी का स्थानांतरण नहीं होता है। इस कारण से नवजात पशु का जन्म सीमित रोग प्रतिरोधक क्षमता के साथ होता है। कोलोस्ट्रम महत्वपूर्ण है क्योंकि यह नवजात पशु को निष्क्रिय प्रतिरक्षा प्रदान करता है जब तक कि उनकी प्रतिरक्षा प्रणाली विकसित नहीं हो जाती है और संक्रमण या टीकाकरण के जवाब में सक्रिय रूप से एंटीबॉडी का उत्पादन करने में सक्षम नहीं हो जाते।
- कोलोस्ट्रम के भीतर मौजूद एंटीबॉडी के मुख्य वर्ग आईजीजी, आईजीएम और आईजीए हैं। प्रत्येक एंटीबॉडी संरचना के साथ–साथ जिम्मेदारी में भी भिन्न होती है। आईजीजी, कोलोस्ट्रम की सबसे प्रमुख एंटीबॉडी, रक्त प्रवाह के साथ–साथ शरीर के अन्य भागों में पाए जाने वाले रोगजनकों की पहचान करने और उन्हें नष्ट करने का कार्य करती है। आईजीएम केवल रक्त में प्रवेश करने वाले बैक्टीरिया को पहचानती है और नष्ट करती है। आईजीए आंतों जैसे विभिन्न अंगों को लाइन करने वाली झिल्लियों को बन्धन द्वारा कार्य करती है, और रोगजनकों को जोड़ने और बीमारी पैदा करने से रोकती हैं।
- अनुसंधान इंगित करता है कि कोलोस्ट्रम से पर्याप्त स्तर के एंटीबॉडी प्राप्त करने वाले नवजात पशु में बीमारी और सेप्टीसीमिया, दस्त और सांस की बीमारी सहित सामान्य संक्रामक रोगों के कारण होने वाली मृत्यु की संभावना कम होती है। चूंकि कोलोस्ट्रम पोषक तत्वों से भरपूर होता है, इसलिए यह ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन और खनिजों का भी एक बेहतर स्रोत है।
- नवजात पशु ऊर्जा के उत्पादन को बढ़ावा देने और शरीर के तापमान को बनाए रखने के लिए कोलोस्ट्रम से वसा और लैक्टोज का उपयोग करते हैं। चयापचय शुरू करने के लिए विटामिन और खनिज भी महत्वपूर्ण हैं और संभवतः पाचन तंत्र के विकास में सहायता करते हैं। कोलोस्ट्रम के गैर–पोषक घटक जैसे वृद्धि कारक पाचन तंत्र को विकसित और परिपक्व करने में सहायता करते हैं।

dkykLVe QhfMx dh lQyrk dks çHkkfor djus okys dkjd&

नवजात पशु को कोलोस्ट्रम के माध्यम से प्रतिरक्षा के निष्क्रिय हस्तांतरण की सफलता मुख्य रूप से तीन कारकों पर निर्भर करती है–

- ❖ कोलोस्ट्रम की गुणवत्ता
- ❖ कोलोस्ट्रम की मात्रा
- ❖ समय

कोलोस्ट्रम की गुणवत्ता सीधे एंटीबॉडी की एकाग्रता से जुड़ी होती है। पहले दूध पिलाने के बाद की गुणवत्ता हमेशा सबसे बड़ी होती है। कोलोस्ट्रम के दूसरे या बाद के दूध में आईजी सांद्रता काफी कम होती है क्योंकि गर्भवती गाय/भेंस के रक्तप्रवाह से स्तन ग्रंथि में आईजी स्थानांतरण आमतौर पर ब्याने के तुरन्त बाद बंद हो जाता है। इसी कारण से गाय/भैंस के प्रसव पूर्व दूध के रिसाव से कोलोस्ट्रम आईजी सांद्रता काफी कम हो सकती है। कोलोस्ट्रम की एंटीबॉडी सांद्रता पशु की नस्ल के और पशु की ब्यात की संख्या पर निर्भर करता है।

*Corresponding author: dc2008v18b@gmail.com

बीफ गायों में आमतौर पर डेयरी गायों की तुलना में कोलोस्ट्रम में उच्च आईजी सांद्रता होती है। वयस्क पशु में पहली बार ब्याने वाळे पशु की तुलना में एंटीबॉडी की उच्च सांद्रता का उत्पादन करती हैं क्योंकि वे अपने जीवनकाल में अधिक संख्या में रोगजनकों के संपर्क में आई होती हैं।

निष्क्रिय प्रतिरक्षा प्राप्त करने के लिए 100 से 200 ग्राम आईजी के एक महत्वपूर्ण द्रव्यमान को नवजात पशु द्वारा पीया और अवशोषित किया जाना चाहिए। तदनुसार नवजात पशु को अपने जीवन के पहले घंटे के भीतर कम से कम 2 लीटर कोलोस्ट्रम का सेवन करना चाहिए और उसके बाद अगले 6 से 12 घंटों में अतिरिक्त 2 लीटर का सेवन करना चाहिए। कोलोस्ट्रम के सेवन का समय महत्वपूर्ण है क्योंकि नवजात पशु की उम्र के रूप में एंटीबॉडी को अवशोषित करने की आंतों की क्षमता कम हो जाती है। 12 घंटे की उम्र के बाद आंतों का अवशोषण उत्तरोत्तर कम होता जाता है और आमतौर पर 24 घंटे के बाद आंते पूरी तरह से बंद हो जाती है।

यदि जन्म के 2 से 3 घंटों के भीतर सक्रिय नर्सिंग शुरू नहीं हुई है तो नवजात पशु को बोतल या ट्यूब फीडिंग के माध्यम से कोलोस्ट्रम के सर्वोत्तम स्रोत के साथ पूरक करने का हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए।

dkykLVe dk HkaMkj.k

प्लास्टिक के कंटेनरों में 4 डिग्री सेल्सियस पर रेफ्रिजरेशन 7 दिनों तक एंटीबॉडी और कोलोस्ट्रम के अन्य घटकों की व्यवहार्यता बनाए रखता है। लंबे समय तक परिरक्षण के लिए, कोलोस्ट्रम को एक साल तक के लिए फ्रीज किया जा सकता है और इसमें पोषक तत्वों की थोड़ी कमी भी हो सकती है। फ्रीजर में कोलोस्ट्रम को स्टोर करने का सबसे अच्छा तरीका 2 लीटर स्टैकेबल, प्लास्टिक कंटेनर या फ्रीजर बैग (डबल बैग होना सुनिश्चित करें) में है। गुणवत्ता बनाए रखने के लिए कोलोस्ट्रम को धीरे–धीरे गर्म पानी (38 डिग्री सेल्सियस में पिघलाएं। तेजी से पिघलना कोलोस्ट्रल एंटीबॉडी की प्रभावकारिता को नुकसान पहुंचा सकता है और कम कर सकता है। कोलोस्ट्रम को कम शक्ति पर माइक्रोवेव सेट में भी पिघलाया जा सकता है। थोड़े समय के लिए माइक्रोवेव करें और लगातार पिघले हुए हिस्से को हटा दें।

अलग–अलग पशुओं के कोलोस्ट्रम को एक साथ इकट्ठा न करें। यह अभ्यास एक बार कम आईजी कोलोस्ट्रम के प्रभाव को कम करने और नवजात पशु के लिए उपलब्ध मात्रा में वृद्धि करने के लिए माना जाता है, मगर प्रतिरक्षा के अधिग्रहण पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। यह नवजात पशुओं में रोग फैलने की संभावना भी बढ़ाता है क्योंकि इसमें कई गायों का प्रतिनिधित्व किया जाता है।

–f=e dkykLVe

जब पशु की मृत्यु हो जा, या अन्य कारकों से कोलोस्ट्रम उपलब्ध न किया जा सके, निम्न उदाहरण से कोलोस्ट्रम उपलब्ध किया जा सकता है :

?kVd	ifjek.k
गर्म पानी	275 मि.ली.
कच्चा अंडा	1
अरंडी का तेल	3 मि.ली.
विटामिन ए	10000 आइ.यू.
गर्म दूध	525 मि.ली.
ऑरिओमाइसिन	80 मि.ग्रा.

इन सभी को अच्छी तरह से मिलाएं और 40° सेल्सियस पर फीड करें, जो एक भोजन के लिए पर्याप्त है, नवजात पशु को दिन में तीन बार खिलाया जाना चाहिए।

Lkkjk'k& कोलोस्ट्रम अम्रत समान है, पशुपालन में नवजात पशु की मृत्यु दर कम करने में इसका महत्वपूर्ण योगदान है।

पशुओं में दूध निकलने का सही तरीका एवं दुग्ध जनित बीमारियां

नरेंद्र सिंह[1] एवं उपेन्द्र सिंह[2]*

[1]राजस्थान पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

[2]अपोलो कॉलेज ऑफ वेटरनरी मेडिसिन, जयपुर

भारत दुग्ध उत्पादन में विश्व में सिरमौर है। विश्व के कुल दुग्ध उत्पादन में भारत की 20% भागीदारी है। भारत में दूध का वार्षिक उत्पादन 198.44 मिलियन टन है (2020–21), जिसमें पिछले साल की तुलना में 5.69% की वार्षिक बढ़ोतरी हुई है। दुग्ध में सभी प्रकार के पोषक तत्व मौजूद होते हैं जिसके कारण दुग्ध रोगाणुओं के पनपने का उत्तम माध्यम साबित होता है जिससे दूध की गुणवत्ता प्रभावित होती है इसलिए स्वच्छ दूध वही होता है जो स्वस्थ पशु से निकाला जाहे और सामान्य स्वाद हो और जिसमे विषाणुओं, विषाक्त पदार्थ, प्रदूषक कारक और मेटाबॉलिट्स से मुक्त हो ऐसे दूध को स्वच्छ दूध कहते हैं।

n|Xèk nkgu dk lgh rjhdk ,o t:jh ckr

दूध दोहने सामान्यतः थका देने वाली एवं महत्वपूर्ण प्रकिया है। जिसमे हार्मोन्स का कार्य भी शामिल होता है। आमतौर पर दुग्ध दोहने में 5.6 मिनट का समय लगता है दुग्ध दोहने में सामान्यतः तीन विधियों का उपयोग होता है।

1. अंगूठा दबाकर दूध निकालना
2. चुटकी से दूध निकालना
3. फुल हैंड मिल्किंग (चारों अंगुलियों और हथेली के बीच में थन को दबाकर दूध निकालना)

वैज्ञानिक दृष्टि कोण से फुल हैंड मिल्किंग को सबसे अच्छा बताया बताया गया है। जिससे दूध निकालते समय थनों में चोट और बीमारियों का खतरा कम रहता है।

t:jh ckr%

1. जिस स्थान पर दूध निकालने की प्रक्रिया होती है वह स्थान स्वच्छ और साफ होना चाहिए।
2. दूध निकालने का बर्तन खुले मुँह का नहीं होना चाहिए।
3. दूध निकालने का बर्तन साफ और विषाणुओं से मुक्त होना चाहिए।
4. दूध निकालने से पहले व्यक्ति को अपने हाथ अच्छे से साफ और सूखे रखने चाहिए।
5. ध्यान रहे दूध निकालने वाला व्यक्ति किसी भी बीमारी से सक्रमित नहीं होना चाहिए।
6. यदि संभव हो सके तो दूध निकालने वाला व्यक्ति को बार–बार नहीं बदलना चाहिए।
7. दूध निकालने से पहले पशु के शरीर को अच्छे से साफ एवं उसको थानों को अच्छे से साफ पानी से धोना चाहिए।
8. थानों को धोने के साथ–साथ हल्का–हल्का मालिश भी करनी चाहिए जिससे दुग्ध उत्पादन में सहायक हार्मोन भी पशु के शरीर में उत्पन होते है।
9. प्रत्येक थन से दूध की पहली कुछ धार अलग वर्तन में निकालना चाहिए तथा उससे शेष दूध में ना मिलाएं।
10. दूध निकालते समय पशु को ऐसा चारा महि देना चाहिए जिससे तीव्र गंध आती हो।
11. सक्रमित थन का दूध हमेशा अंतिम में निकालना चाहिए जिससे दूसरे थानों में सक्रमित होने का खतरा कम रहता है।
12. दूध निकालने का कार्य जल्दी व सही और नरमी पूर्ण होना चाहिए।

çe|[k chekfj;k&

दूध में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व होते है जिसके कारण बैक्टीरिया/कीटाणु दूध के विभिन्न घटकों का प्रयोग करके उससे पीने के लिए अनुपयोगी बना देते हैं। भारत के कई भागों में कच्चा दूध पीने का प्रचलन है जिसके कारण बहुत सारे लोग ऐसी गंभीर बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं इसलिए कच्चा दूध स्वस्थ के लिए हानिकारक

*Corresponding author: drfauj@gmail.com

साबित होता है। दूध जनित बीमारियों वह होती है जो संक्रमित दूध पीने से मानव में फैल जाती है सक्रमित दूध पीने से होने वाली प्रमुख बीमारियां–

1- **cl ykfl l&** ब्रूसलोसिस सामान्यतः ब्रूसल्ला अबोर्टस एवं ब्रूसल्ला मेलेटेंसिस जीवाणु से होती है यह बैक्टीरिया कच्चे दूध में पाया जाता है जब कोई व्यक्ति कच्चे दूध व पनीर का सेवन करता है तो इस रोग से ग्रसित हो जाता है बुखार, पसीने आना, साँस लेने में दिक्कत आदि प्रमुख लक्षण है। पशु परीक्षण और सक्रमित पशु उन्मूलन के माध्यम से और लोगों को कच्चे दूध न पीने की जारूकता से रोकथाम संभव हो सकती है।

2- **rifnd&** यह रोग भी संक्रमित दूध पीने से होती है। इससे क्षय रोग भी कहते हैं यह एक बैक्टीरिया (मैकबैट्रिआ टुबरक्लोसिस) से होता है। इस रोग में फेफड़ों का गलना प्रमुख लक्षण होता है। इसके रोग के लक्षण विकसित होने में महीनों लग जाते हैं इसमें सामान्यः थकान, सांसे लम्बी लेना, खांसी आना, पसीना आना आदि।

3- **Q-Qhoj&** यह बीमारी भी संक्रमित दूध पीने से होती है। इसका प्रमुख जीवाणु कोक्सिला ब्रूनेटी होता है इसमें व्यक्ति को बुखार आना, ठण्ड लगना सिर दर्द और कमजोरी आदि है।

4- **QM ikbtfux&** कच्चे दूध में बैक्टीरिया बहुत जल्दी उत्पन होते हैं और जहरीले मेटाबॉलिट्स बना लेते हैं जब कोई व्यक्ति इस दूध का सेवन करता है तो फ़ूड पॉइज़निंग का शिकार बन जाता है। इसके प्रमुख लक्षण पेट में दर्द, पेट में ऐठन, दस्त, कमजोरी, बुखार आदि है।

5- **dEI ,ykcDVfjvkfll&** यह रोग भी जीवाणु द्वारा कच्चे एवं संक्रमित दूध के सेवन करने से फैलता है यह बैक्टीरिया भोजन विशाक्त के लिए भी जिम्मेदार है।

lkjk'k&

वर्तमान परिदृश्य में जहां कोरोना जैसे महामारी लाखों लोगों की जान ले चुकी है। इसलिए यह विचार करने पर मजबूर करता है कि दूध निकलते समय सही तरीका, हाइजीनिक कंडीशन रखते हुए आवश्यक बातों का ध्यान रखना चाहिए। गाम देहात में आज भी यह देखा गया है कि लोग कच्चा दूध का सेवन करते है। जो कि खतरनाक और दूध जनित रोगो का शिकार बनते है। इसलिए हमें दूध को गरम करके सेवन करना चाहिए जिससे कोरोना जैसी महामारियों से लड़ने में हमारा शरीर और रोग प्रतिरोधक क्षमता मजबूत और सशक्त बने।

प्रतिकूल मौसम में पशुधन के रख-रखाव हेतू चारा प्रबंधन

सतपाल

चारा अनुभाग, आनुवाशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग,

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125004

हरियाणा अपनी 'मुर्रा' नस्ल की भैंसों के लिए विश्व में प्रसिद्ध है, जिन्हें 'ब्लैक गोल्ड' भी कहा जाता है इसके अलावा दोहरे उद्देश्य वाली 'हरियाणा' नामक गाय की नस्ल की भी विशेष पहचान है। राज्य लंबे समय से अन्य राज्यों और विदेशों में मुर्रा जर्मप्लाज्म का प्रमुख स्रोत रहा है। राज्य की अर्थव्यवस्था में पशुधन संपदा का महत्वपूर्ण योगदान है क्योंकि यह क्षेत्र पूरे वर्ष रोजगार व महिलाओं सहित छोटे किसानों के लिए आजीविका का एक प्रमुख स्रोत भी है। फसल उत्पादन के साथ-साथ पशु पालन का महत्व लगातार बढ़ रहा है। यह भी स्पष्ट है कि पशुधन क्षेत्र की सफलता मुख्य रूप से सस्ती कीमत पर चारे की पर्याप्त उपलब्धता पर निर्भर करती है। डेयरी फार्मिंग में पोषण का खर्च, कुल खर्च का लगभग 60 प्रतिशत होता है। इस प्रकार, डेयरी क्षेत्र की व्यवहार्यता के लिए उच्च पोषक मूल्य और बेहतर पाचन क्षमता के चारे व फीड महत्वपूर्ण है। पशुधन उत्पादन के विकास में तेजी लाने के लिए चारे की कमी एक प्रमुख बाधा है।

gfj;k.kk jkT; dk i'kq/ku ifj–';

पशुधन गणना (2019) के अनुसार हरियाणा राज्य में, पिछली पशुधन गणना (2012) की तुलना में भैंसों की संख्या में 28.22 प्रतिशत की कमी आई है। राज्य की भैंस की आबादी 6.1 मिलियन (2012) से घटकर 4.4 मिलियन (2019) हो गई है। राज्य में पिछली पशुधन गणना (2012) की तुलना में ऊंट की आबादी में 72.65 प्रतिशत की कमी आई है। राज्य की ऊंट की आबादी 0.19 लाख (2012) से घटकर 0.05 लाख (2019) हो गई है। राज्य में पिछली पशुधन गणना (2012) की तुलना में घोड़े व पौनी की आबादी में भी 73.58 प्रतिशत की कमी आई है। राज्य की घोड़े व पौनी की आबादी 0.37 लाख (2012) से घटकर 0.10 लाख (2019) हो गई है।

*Corresponding author: satpal_fpj@hau.ac.in

i'kqvksa ds fy, pkjs dh deh

वर्ष के कुछ महीनों में जैसे मई-जून व अक्तूबर-नवम्बर में हरे चारे की कमी आ जाने के कारण हम पशुओं के लिए हरा चारा पूर्ण मात्रा में नहीं दे पाते हैं जिसके फलस्वरूप पशुओं का स्वास्थ्य खराब हो जाता है एवं दूध उत्पादन में कमी आती है। सामान्यतः पशु आहार में मोटे चारे (रौफेज) और दाने के मिश्रण (सांद्रण) शामिल होते हैं। रूफेज मोटे तौर पर फाइबर होता है जबकि कॉन्संट्रेट में फाइबर कम होता है और इसमें अपेक्षाकृत उच्च स्तर के प्रोटीन और अन्य पोषक तत्व होते हैं। आमतौर पर एक पशु का आहार उसके आनुपातिक वजन, उत्पादन क्षमता और प्रजनन अवस्था पर निर्भर करता है। सामान्यतः पशु को कुल आहार का 2/3 भाग मोटा चारा व 1/3 भाग दाना मिश्रण दिया जाना चाहिए। हरा चारा डेयरी पशुओं के लिए पोषक तत्वों का एक सस्ता स्रोत है। यह अत्यधिक स्वादिष्ट व सुपाच्य होता है। निम्नलिखित बातों को ध्यान रखने से पौष्टिक व अधिक मात्रा में हरा चारा पूर्ण वर्ष मिलता रहता है।

gfj;k.kk esa pkjk mRiknu c<+kus ds egRoiw.kZ fcanq&

- चारा फसल उत्पादन के तहत क्षेत्रफल में वृद्धि की जाए।
- हरियाणा के लिए अनुशंसित विभिन्न चारा फसलों की उन्नत किस्मों के बीजों का प्रयोग करें। हमेशा चारा फसलों की किस्मों की उन्नत व उच्च गुणवत्ता वाले प्रमाणित/ट्रूथफूली लेबल बीज/रोपण सामग्री का प्रयोग करें।
- चारे की खेती के लिए अनुशंसित पैकेज का पालन करें जैसे भूमि की तैयारी, समय पर बुवाई, उर्वरक प्रबंधन, सिंचाई, खरपतवार और कीट नियंत्रण व कटाई प्रबंधन। इसके परिणामस्वरूप हरे व सूखे चारे की पैदावार अधिक होगी।

- दो मुख्य मौसमी फसलों जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का या नेपियर बाजरा संकर घास की लाइनों के बीच में लोबिया आदि जैसी चारे वाली फसलों की कम अवधि की किस्में उगाना।
- मक्का, बाजरा और ज्वार जैसी घास वाली चारा फसलों की खेती, दलहनी चारा फसलें जैसे लोबिया व ग्वार के साथ अंतः फसलीकरण के हिसाब से करें।
- पशुपालक कुछ रकबे में हरे चारे हेतू बारहमासी फसलें उगाएं जैसे नेपियर बाजरा संकर घास, ज्वार व मीठी सूडान घास व रिजका की 3 से 5 साल चलने वाली किस्में आदि।
- चारे की कमी को ध्यान रखते हुए कुछ विशेष फसल चक्रों को लगाने से पौष्टिक व अधिक मात्रा में हरा चारा पूर्ण वर्ष मिलता रहता है।
- किसानों को 'हे' व साइलेज बनाने का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर बीज उत्पादक एजेंसियों द्वारा उन्नत चारा किस्मों के बीज का उत्पादन किया जाना चाहिए।
- पशुओं के चारे के अलावा किसी अन्य उद्देश्य के लिए भूसे या चारे के उपयोग पर प्रतिबंध होना चाहिए।
- हरे व सूखे चारे के उपयोग के साथ–साथ दाने के मिश्रण का भी उपयोग करने का प्रयास किया जाना चाहिए।
- क्षेत्रवार चारा बैंक स्थापित करने की जरूरत।
- गौशालाओं को चारा फसलों की उन्नत किस्में ही उगानी चाहिए ताकि अधिक मात्रा में हरे चारे का उत्पादन हो सके।
- बीज उत्पादन या कृषि अनुसंधान से जुड़े हुए विभिन्न सरकारी या अर्ध–सरकारी संस्थानों को चाहिए कि वे बचे हुए फसल अवशेषों/तूड़ी/भूसे को गौशालाओं को उपलब्ध करवाएं।

çfrdly ekle ifjfLFkfr;k e i'k/ku d çc/ku d fy, ;ktuk,¡

पशुपालन ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पशुधन पालन पूर्णकालिक और सहायक दोनों तरह से सार्थक व्यवसाय प्रदान करता है स्थान ही और सुनिश्चित आय प्रदान करता है और मानव संसाधन का बेहतर उपयोग सुनिश्चित करता है। यह व्यवसाय ग्रामीण और शहरी आबादी की पर्याप्त संख्या, जिनमें से कई महिलाएं है विशेष रूप से स्वरोजगार प्रदान करता है जो पशुधन की देखभाल और प्रबंधन में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। पशु दूध के रूप में अति आवश्यक संतुलित पौष्टिक पशु प्रोटीन प्रदान करता है, मांस और अंडा और घर की खाद्य सुरक्षा में सुधार करता है।

o"kk dh deh o foyfcr ekulu dh fLFkfr d fy, vkikr ;ktuk

- गर्मी के तनाव को कम करने के लिए पशुओं को छायादार स्थान पर रखना चाहिए।
- पशुओं को गर्मी से बचाने के लिए सुबह जल्दी (6–10 पूर्वाह्न) और दोपहर बाद (4–7 अपराह्न) चराया जाना चाहिए।
- पशुओं को चौबीसों घंटे स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराया जाए।
- भैंसों को दिन में कम से कम एक बार कीचड़ में लोट लगाने या जोहड़ में नहलाने के लिए ले जाना चाहिए।
- चारे की कमी की स्थिति में पशुओं का 'यूरिया शीरा खनिज ब्लॉक' चाटना बहुत उपयोगी है क्योंकि यह प्रोटीन, ऊर्जा और आवश्यक खनिज प्रदान करके पशुओं के स्वास्थ्य को बनाए रख सकता है। यह एक लागत प्रभावी, संभालने में आसान और परिवहन में आसान और व्यावसायिक रूप से दुग्ध सहकारी समितियों के माध्यम से उपलब्ध हो जाता है।
- चारे की कमी के कारण, सूखे रौगे वाले पूर्ण फीड ब्लॉक, 50:50 के अनुपात में सांद्र व अपरंपरागत पूरक की आपूर्ति की जाए।
- सूखे रौफेज पर 10 प्रतिशत शीरा या कच्चे गुड़ के घोल का छिड़काव करें और पशुओं के रख–रखाव के लिए 2 प्रतिशत यूरिया।
- सूखी तूड़ी को 4 प्रतिशत यूरिया से उपचारित करें, एक सप्ताह के लिए वायुरोधी स्थिति में संग्रहित करें और जानवरों को खिलाएं।

- उत्पादन करने वाले पशुओं के उत्पादन के न्यूनतम स्तर को बनाए रखने के लिए व आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उनको उनकी आवश्यकता का 50 प्रतिशत चारा उपलब्ध कराया जाना चाहिए। अन्य पशुओं के अस्तित्व को सुनिश्चित करने के लिए उनके रख–रखाव हेतू राशन प्रदान किया जाए।
- चारे की कमी की अवधि के दौरान संरक्षित चारा (हे या / व साइलेज) पशुओं को खिलाना चाहिए।
- क्षेत्र में उपलब्ध वृक्षों के पत्तों को सांद्रण के साथ पूरक के रूप में खिलाएं।
- पशुओं को रख–रखाव आहार के रूप में सूखे और गिरे हुए पेड़ के पत्तों को 20 प्रतिशत चोकर, 10 प्रतिशत गुड़, 2 प्रतिशत यूरिया, 2 प्रतिशत खनिज मिश्रण और 1 प्रतिशत नमक के साथ मिलाकर भी खिलाया जा सकता है।
- क्षेत्र में (मृदा में) या चारे में किन पोषकतत्वों कमी है, इसके आधार पर पशुओं को मिनरल सप्लीमेंट देना चाहिए।
- प्रति वयस्क पशु के लिए 40–50 ग्राम नमक और छोटे जुगाली करने वाले व बछड़ों के लिए 10–20 ग्राम नमक प्रतिदिन फीड के माध्यम से प्रदान किया जाना चाहिए।
- पशुओं की आवश्यकता के हिसाब से चारे की कमी की स्थिति में चारा अधिशेष राज्यों से कमी वाले राज्यों में स्थानांतरित किया जा सकता है।
- ब्लीचिंग पाउडर या चूने के प्रयोग से पशु शेड को कीटाणुरहित करें।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. **पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम**
2. **पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)**
3. **निःशुल्क SMS सेवा**
4. **पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री**
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

पशुओं की पहचान करने की विधियाँ

मनीषा सिंगोदिया* एवं लोकेश टाक

राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

पशु को जन्म से ही पहचानना जरूरी होता है ताकि उसका तथा उसकी माँ तथा पिता दोनों का रिकॉर्ड संधारण किया जाये। जब झुण्ड का आकार बड़ा हो तो पशुओं को पहचानने के लिए उनके शरीर के विभिन्न हिस्सों पर कृत्रिम रूप से चिन्ह लगाया जाता है उसे पशु को चिन्हितकरण करना कहते हैं।

fpfUgr djus dk mís';

- इस क्रिया को अपनाने से प्रत्येक पशु का रिकॉर्ड आसानीपूर्वक संधारण करने में मदद मिलती है। जैसे–उत्पादन रिकॉर्ड, प्रजनन सम्बन्धी जानकारियाँ आदि।
- पशुओं के बड़े समूह में से उसकी वास्तविक सही व यथार्थ पहचान जानने हेतु।
- पशुओं को चिन्हित करने से उसके प्रबन्धन (Management) सम्बन्धी कार्य आसान हो जाता है। जैसे– खान–पान, टीकाकरण आदि।
- पशुओं का जीवन बीमा करवाने व उन पर बैंक द्वारा ऋण लेने हेतु चिन्हिकरण करना जरूरी होता है।
- जब पशु चोरी हो जाये, खो जाये तो उस पर मालिकाना हक जताने में चिन्हीकरण सहायक होता है।
- पशु क्रय/विक्रय करने, प्रतियोगिताओं व प्रदर्शनियों में भाग लेते समय पहचान बनाने में भी चिन्हीकरण सहायक होता है।
- पशु का उपचार, दूध उत्पादन, मदकाल, प्रसवकाल आदि को जानने में मददगार होता है।

fpfUgr djrs le; è;ku esa j[kus ;ksX; ckrs&

पशु को जब भी चिन्हित कर उसे नियंत्रित करे अन्यथा उसे व चिन्हितकर्त्ता दोनों को चोट लग सकती है अथवा चिन्हितकरण सही नहीं होगा जैसे कान का फट जाता आदि।

*Corresponding author: manishasingodia27@gmail.com

पशुओं को चिन्हितकरण करने का तरीका सस्ता हो, साधारण हों। पशुओं को अनावश्यक दर्द नहीं हो।

पशुओं पर चिन्हित अंक स्पष्ट हो ताकि दूर से ही पढ़े जा सके।

i'kqvksa dh igpku djus ds rjhds&

1- **çk—frd fpUg&** यह निशान पशु के शरीर पर जन्म के साथ प्राकृतिक रूप से ही लगे होते हैं। जैसे– विभिन्न रंगों के धब्बे, निशान अथवा स्वयम् के शरीर का रंग।

2- **vftr fpUg&** ये वे निशान है जो जन्म के पश्चात्, उसके जीवनकाल में किसी दुर्घटना, चोट या अन्य किसी प्रकार स्थाई या अस्थाई रूप से बन जाते हैं उदाहरण–जलने के निशान, जीन के निशान, घाव भरने के निशान आदि।

3- **—f=e fpUg&** ये निशान पशुपालक अपनी सुविधा हेतु कृत्रिम रूप से पशु के शरीर पर लगाता है जिससे पशु आसानी से पहचाना जा सके। कृत्रिम चिन्हित करने की विधियाँ– स्थाई चिन्हित विधियाँ व अस्थाई विधियाँ।

LFkkÃ fpfUgr fofèk;k¡&

- **xksnuk&** यह एक अच्छा, स्थाई चिन्हितकरण का तरीका है। यह विधि नवजात में कुशलता के साथ काम में ली जाती है, लेकिन यह तरीका गहरे काले रंग के पशुओं में काम में नहीं लिया जा सकता है क्योंकि उनके कान का गहरा रंग होने के कारण गोदना का निशान आसानी से नजर नहीं आता है। अतः उन पशुओं में विशेष कारगर है जिनके कानों का रंग हल्का होता है।
- **nkxuk&** यह पहचान का सबसे अच्छा, सस्ता, पुराना तथा सामान्य व स्थाई तरीका है जो साधारणतया गाय, भैंस, घोड़ा व ऊँट तथा डेयरी पशुओं को

चिन्हित करने के उपयोग में लिया जाता है। इस विधि से पशु को चिन्हित करने वाले पशु की उम्र कम से कम 3–12 माह तक की होनी चाहिए। दागने के काम में लिया जाने वाला उपकरण लोहे अथवा ताम्बे (कॉपर) का बना होता है।

स dMdh Mkyuk@dku cÈèkuk& गाय, भैंस, भेड व बकरियों में कृत्रिम रूप से चिन्हित करने का सबसे सुगम व प्रयुक्त तरीका है। किसी भी हल्के व मजबूत धातु (एल्यूमीनियम, पीतल) या प्लास्टिक के बने होते हैं। इन पर अक्षर, नम्बर या किसी संस्था का निशान अंकित होता है।

स dku dkVuk& यह तरीका साधारणतया सुअरों में सबसे ज्यादा काम में लिया जाता है लेकिन कभी–कभी बकरियों में भी काम में लिया जाता है। इसमें कान के विभिन्न हिस्सों में धारदार केंची अथवा पिन्चर से "अ" के आकार का कट लगाते हैं तथा कान में छेद करते हैं। "अ" के आकार का निशान कान के किनारों पर करते हैं तथा छेद बीच में करते हैं।

byDV',fud Vsxx

यह विधि पशुओं को नियंत्रित करने का नवीनतम तरीका है इसे चिप मेथड़ भी कहते हैं। इस विधि से गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सुअर, कुत्ते तक चिन्हित कर सकते हैं यहाँ तक आजकल तो हाथी व शेर आदि भी इसी विधि से चिप शरीर में लगाई जाती है, इससे पशु की पहचान ही नहीं उसमें उसकी सम्पूर्ण गतिविधियों का अध्ययन भी किया जाता है।

vLFkkÃ fofèk;k&

- jax vkj iSUV& मुख्य रूप से इसका उपयोग भेड़ों में किया जाता है। इस विधि में रंग भेड़ की ऊन पर लगा देते हैं। इस विधि से भेड़ों के पूरे समूह को चिन्हित करते हैं जिससे एक समूह दूसरे समूह से रंग के अन्तर से पहचान लिया जाता है। इस विधि का उपयोग भेड़ के मदकाल को जानने के लिए मेढे के निचले हिस्से में रंग की पोटली बाँध कर भी किया जाता है।
- ud LVªi@ud pSu& इस विधि में एक टिन की पट्टी अथवा धातु का छल्ला जिस पर अंक अथवा चिन्ह् लगाकर पशु की गर्दन में रस्सी द्वारा अथवा चैन द्वारा पहचान हेतु बाँध देते हैं।
- i¡[k Vsxx& इस विधि का उपयोग मुर्गियों में किया जाता है। इस विधि में एल्यूमिनियम से बने हुए टेग्स पर व्यक्तिगत अथवा समूह का अंक लगाकर पक्षियों के पंखों में लगा देते हैं।
- Vkx ij Vsx yxkuk& इस तरीके का उपयोग भी साधारणतया मुर्गियों व बटेर में किया जाता है। इस विधि में इच्छित टेग पक्षी के पैर में लगा दिया जाता है जिस पर व्यक्तिगत अथवा समूह का अंक अंकित होता है।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

शूकर/सुअर उत्पादन क्षेत्र में जैव सुरक्षा उपाय के महत्व

लक्ष्मी कान्त* एवं अनिल पाटीदार

राजस्थान पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, बीकानेर

पशुओं, विशेष रूप से शूकर / सुअर से मानवों और मानवों से पशुओं को होने वाली बीमारी की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ये बढ़त राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देखी जा सकती है। उदाहरण के लिए निपाह विषाणु, एवियन इनफ़्लुएंज़ा और विश्वव्यापी H1N1 2009 विषाणु का प्रकोप।

ये रोग आम जनता की सेहत और पशुओं के व्यापार पर नकारात्मक प्रभाव डालते है, इसलिए इनका रोकथाम बहुत ज़रूरी है।

विकसित जैव सुरक्षा कार्यक्रम और उसका सुचारू कार्यान्वयन का महत्व– यह खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम का एक आवष्यक घटक है।

उपभोक्ता भोजन और उसके उत्पादों को खरीद / उपयोग के समय उसकी गुणवत्ता और खाद्य आपूर्ति की सुरक्षा का मुख्य रूप से ध्यान रखता है। एक विकसित जैव सुरक्षा कार्यक्रम के कारण उपभोक्ता स्वीकार्यता बढ़ जाती है। स्वस्थ जानवर के अनुपात में वृद्धि जो अधिक उत्पादक हैं। बेहतर पशु कल्याण, बेहतर कार्य कुशलता / दक्षता, यह सभी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से और सुअर का मांस / पोर्क उत्पादक को लाभ प्रदान करते हैं।

tSo lqj{kk dk fl)kUr% इस प्रकार के उपायों का क्रियान्वयन करना जो कि नई बीमारियों को पशुओं के झुंड में आने के ख़तरे को कम करें और रोगों को पशुओं में फैलने से रोके (आंतरिक नियंत्रण)। इसके लिए ज़रूरी है कि पशुपालक और इस व्यवसाय से जुड़े लोग अपना नज़रिया और व्यवहार बदले और नई बीमारियों के ख़तरे को घरेलू, विदेशी और जंगली जानवरों और उनसे मिलने वाले उत्पाद, सभी में कम करने का प्रयास करें।

tSo lqj{kk dk y{;&

1. एक फार्म से दूसरे फार्म तक फैलने वाले रोग को सीमित करना
2. सुअर–से–सुअर रोग के संचरण को सीमित करना
3. संक्रामक सुअर रोगों के प्रभाव को कम करना
4. आर्थिक नुकसान को कम करना

lqvjksa esa chekjh lapj.k dk ekxZ&

1- **çR;{k lqvj&l&lqvj lEidZ&** यह मार्ग सुअर रोगों के संचरण के लिए सबसे शक्तिशाली और सामान्य मार्ग है। यह रोगों को संक्रमित सुअर से अति संवेदनशील सुअर के बीच सीधे संपर्क के माध्यम से प्रेषित करता / फैलाता है।

2- **cgqr utnhdh] ycs le; rd ;k ckj&ckj lEidZ]** उदाहरण के लिए परिवहन के दौरान ट्रकों में, गौशाला में, सामुहिक चराई के दौरान–रोग संचरण की संभावना बढ़ जाती है। कुछ जानवर जो स्वस्थ लगता है, वह भी रोगाणुओं का उत्सर्जन कर सकता है, ऐसे जानवर बहुत खतरनाक हैं। इन जानवरों को रोगज़नक़ों के मूक वाहक कहा जाता है।

3- **i'kq oh;Z@'kqØ@cht&** सुअर वीर्य में कई संभावित रोगजनक शामिल हो सकते हैं। वीर्य संग्रह और वितरण के दौरान उचित स्वच्छता बहुत जरूरी है। सामान्यतया, वीर्य कूरियर द्वारा फ़ार्म में आता है, कूरियर आने के तुरंत बाद वीर्य का बैग कूरियर से निकाल कर 63 डिग्री फ़ारेनहाइट के तापमान पर वीर्य कूलर में रखना चाहिए। सभी वीर्य पैकेजिंग (बैग, स्टायरोफोम कूलर आदि) फ़ार्म के बाहर रहना चाहिए।

4- **gok dk ek/;e ls&** कोई दो फ़ार्म के बीच सुरक्षित दूरी होना चाहिए। यह दूरी फ़ार्म के आकार, हवा में रोगज़नक़ों का स्तर, पर्यावरणीय परिस्थितियों के विरुद्ध रोगजनकों में प्रतिरोध, जलवायु परिस्थितियों और स्थानीय भूगोल पर निर्भर करता है।

mnkgj.k% एफ.एम.डी. विषाणु 20 किलोमीटर तक हवा

*Corresponding author: dr.lakshmi221@gmail.com

तक ले जाया जा सकता है।

स्यूडोराबीज विषाणु 9 किलोमीटर तक हवा तक ले जाया जा सकता है।

छोटी–छोटी बूंदों से सुअर इन्फ्लूएंजा वायरस किसी परिसर के अंदर कम दूरी तक फैल सकता है।

5- **lkekU; euq";@ykx&** लोग जूते, कपड़े, हाथ आदि के मध्यम से रोगजनकों को फैला सकते हैं। लोग प्रत्यक्ष संक्रमित हो सकते हैं और रोगजनकों के वाहक भी। सुअर फ़ार्म के कामगारों/पशुपालक को इससे अवगत होना चाहिए, किसान/पशुपालक, सुअर फ़ार्म के कार्यकर्ता, तकनीकी अधिकारी और पशु चिकित्सक को कई फ़ार्म का दौरा करने की आवश्यकता हो सकती है। जिससे एक फार्म से दूसरे फार्म पर रोग फैलने का ख़तरा बढ़ सकता है।

6- **okgu vkSj midj.kksa }kjk&** किसानों द्वारा उपयोग किए जाने वाले उपकरण को रोग फैलाने का संभावित स्रोत माना जाना चाहिए। उदाहरणः सुअर–मल लगे गंदे वाहन और उसके टायर एक फार्म से दूसरे फार्म पर रोग फैलने का ख़तरा बढ़ सकता है।

7- **lqvj dk pkjk vkSj ihus ds ikuh&** चारा और पानी दूषित हो सकते हैं, रोग बनाए रखने के और उसके फैलाव मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। कुछ रोगज़न क़ा दूषित मांस कचरे में जीवित रह सकते हैं, इसलिये इस प्रकार के खाद्य अपशिष्टों/मॉंस को प्रयोग करते समय विशिष्ट ध्यान किया जाना चाहिए। कई देशों ने अप्रयुक्त मांस उत्पादों को सुअरों को खिला देने पर रोक लगाई है। ताजा सूअर का मॉंस रोगज़नक़ों के संचरण के लिए जोखिम कारक हैं।

8- **lqvj [kkn@lqvj&ey vkSj fcLrj&** संक्रमित सुअरों से खाद में बड़ी मात्रा में वायरस, बैक्टीरिया और/या परजीवी होते हैं। यह जीव दूषित हाथों, भोजन, पानी इत्यादि के मार्ग से मुख (फीको–ओरल मार्ग) में जा सकते हैं और मानव और पशु स्वास्थ्य के लिए जोखिम पैदा कर सकता है।

अगर सुअर खाद/सुअर–मल और बिस्तर आदि का पर्याप्त रूप से इलाज/प्रसंस्करण/निपटारा नहीं किया और इसका खेती के लिए खाद के रूप में प्रयोग किया गया तो यह मानव खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिकी तंत्र में रोगजनक रोगों को पेश कर/फैला सकता हैं। सुअर–खाद में एस्केरिस, टीनिया, क्रिप्टोस्पोरिडियम, एरसीनिया और साल्मोनेला, क्षय/तपेदिक के बैक्टीरिया, कंपयलोबक्टोर, फीकल कोलीफ़ॉर्म, और अन्य रोगजनकों, जैसे कि हेपेटाइटिस–ई वायरस हो सकते हैं। बिस्तर में– माइकोबैक्टीरियम एवियम बैक्टीरिया हो सकते हैं।

सुअर खाद/सुअर–मल और बिस्तर को इन्फ्लूएंजा वायरस के लिए संचरण का एक प्रमुख स्रोत नहीं माना जाता है।

9. पक्षियों, चमगादड़, मूषक, जंगली और जंगली सुअरों और आवारा/घरेलू पशुओं–चूहे आमतौर पर सुअरों के साथ निकट संपर्क में रहते हैं और एक फ़ार्म से दूसरे तक कई रोगों को ले जा सकते हैं। मूषक 3 या 4 किमी तक यात्रा करने में सक्षम हैं। पक्षी अपने मल से बीमारियों का प्रसार करते हैं। पक्षी बोर्डेटेला, एरीसीपेलस और एवियन ट्यूबरकुलोसिस प्रसारित कर सकते हैं। जंगली जानवर कई रोगों का स्रोत होते हैं, जैसे ब्रूसेलोसिस, लेप्टोस्पायरोसिस, ट्राइचिनेला, स्यूडोराबीज और कई अन्य रोगजनकों।

10. कीट–पतंग/सन्धिपाद–मच्छर, मक्खियों, टिक्स आदि कई रोगज़नक़ों से संक्रमित होते हैं।

tSo lqj{kk esa lqèkkj djus ds fy, fd, x, mik; fuEu ij fuHkZj djrs gSa&

1. सुअर उत्पादन प्रणाली
2. स्थानीय भौगोलिक स्थितियों
3. सामाजिक–आर्थिक स्थितियों

tSo lqj{kk ds rhu eq[; rRo fuEu gSa&

1- vyxko@i'FkDdj.k&

संक्रमित पशुओं और दूषित सामग्री को फैलने के संभावित अवसरों को सीमित करने के लिए बाधाओं का निर्माण और रख–रखाव करना चाहिए, जिससे की दूषित वाहक किसी अन्य साफ–सुथरे स्थान/पशु को दूषित ना कर सके। अगर ठीक से लागू हो तो यह समाधान प्रदूषण

और संक्रमण को रोक देगा।

vyxko mik;ke 'kkfey gS&

- बाहर खेतों, बाजार या गांवों से सुअरों के प्रवेश को नियंत्रित करना
- नए खरीदे गए जानवरों के लिए संगरोध (कोरांटीन) को लागू करना
- एकल स्रोत से प्रतिस्थापन सुअर चुनें जहां विश्वसनीय आनुवंशिक सुधार कार्यक्रम और रोग नियंत्रण कार्यक्रम चालू हो
- खेत/फ़ार्म के चारों ओर बाड़ लगाना
- लोगों, साथ ही पक्षियों, चमगादड़, चूने, बिल्लियों और कुत्तों के लिए प्रवेश नियंत्रण
- दो फ़ार्म के बीच में पर्याप्त दूरी बनाए रखने
- फार्म कर्मचारियों के लिए जूते और कपड़ों प्रदान करना जोकि केवल खेत पर पहना जाने के लिए हो
- ऑल–इन–ऑल–आउट प्रबंधन प्रणाली का उपयोग करना

2- lQkbZ&

जैव सुरक्षा में अगला सबसे प्रभावी चरण सफाई है। सबसे अधिक रोगज़नक़ मल, मूत्र या स्राव में उपस्थित होते हैं और उनकी सतह पर रहते हैं। सफाई इसलिए अधिकांश दूषित रोगजनकों को हटा देती है। किसी भी उपकरण और सामग्री की सतह पर कोई गंदगी दिखाई नहीं देनी चाहिए।

छोटी वस्तुओं की सफाई के लिए साबुन, पानी और एक ब्रश पर्याप्त हैं लेकिन बड़े वाहनों, जैसे लॉरी या ट्रैक्टर के लिए एक उच्च दबाव वॉशर (110 से 130 बार) की आवश्यकता होती है।

mnkgj.k& उच्च दाब वाशर, कम दबाव वॉशर, वाहनों, परिसर और की सफाई, जूते की सफाई का उचित स्थान

3- dhVk.kq'kksèku@jksxk.kquk'ku&

जैव सुरक्षा की अंतिम चरण कीटाणुशोधन है।

ifjHkk"kk& पशु रोगों के संक्रामक या परजीवी को नष्ट करने की प्रक्रियाएं जो उचित सफाई के बाद की जाती है। यह परिसर, वाहनों और विभिन्न वस्तुओं पर लागू होता है, जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से रोगजनकों से दूषित हो सकते हैं। **mnkgj.k&** एल्कोहॉल, फोर्मल्डीहाइड, क्लोरिन, फिनोल्स, एसिड्स आदि।

कीटाणुशोधन तभी महत्वपूर्ण है जब लगातार और सही ढंग से किया जाता है। कीटाणुशोधन उन सामग्रियों पर मौजूद किसी भी रोगजन को निष्क्रिय कर देता है जो पहले से अच्छी तरह साफ हो चुके हैं। निस्संक्रामकों को पर्याप्त और अनुशंसित सांद्रता में और समय तक इस्तेमाल किया जाना चाहिए।

lkQ& lqFkjk lqvj dk mRikn&

यह सबसे बुनियादी पारंपरिक प्रणाली हैं इसमें स्वास्थ्य जोखिम कई हैं क्योंकि अन्य सुअरों और जानवरों के साथ संपर्क नियंत्रित नहीं है। यह रोग प्रसार के लिए अनुकूल परिस्थितियां बनाता है। सुअरों के मालिक प्रभावी जैव सुरक्षा उपायों को लागू नहीं कर सकते, क्योंकि सुअर दिन में आज़ादी से घूमते हैं। इस प्रणाली में जैव सुरक्षा उपायों को अपनाना कठिन है। हालांकि, कुछ ऐसे सरल उपाय हैं जिन्हें लागत और समय के संदर्भ में कम से कम ध्यान देने की जरूरत है। ये निम्नानुसार हैं–

1. दवाओं द्वारा परजीवी नियंत्रण
2. नए खरीदे गए जानवरों के लिए अलगाव
3. एकल स्रोत से प्रतिस्थापन सुअर चुनें

NksVs iSekus ij lqvj dk mRikn&

यह प्रणाली अक्सर घरों में पाया जाता है। पशु आश्रयों में ही सीमित होते हैं, जो स्थानीय साधारण सामग्री से बने होते हैं अथवा आधुनिक आवास भी हो सकते है। सुअर भोजन/फ़ीड के लिए पूरी तरह से उनके पशु मालिक पर निर्भर होते हैं। सुअर मांस स्थानीय बाजारों में बेच दिया जाता है।

कुछ ऐसे सरल उपाय हैं जिन्हें जैव सुरक्षा के संदर्भ में अधिक से अधिक ध्यान देने की जरूरत है। ये निम्नानुसार हैं–

- केवल स्वच्छ सुअरों का प्रवेश
- बीमार सुअरों के व्यापार से बचना
- नए खरीदे गए जानवरों के लिए अलगाव
- पक्षियों को रोकने के लिए जाल स्थापित करें

- फार्म उपयोग के लिए विशिष्ट कपड़े और जूते
- विभिन्न सुअर प्रजातियों को अलग रखें
- परजीवी नियंत्रण
- खाद/सुअर मल नियंत्रण
- रेस्तरां और रसोई से बचे हुए खाद्य को तभी पशु को खिलाए जब वह एक न्यूनतम तापमान पर पर्याप्त अवधि के लिए गर्म किया गया हो (कम से कम एक घंटे के लिए 100 डिग्री सेल्सियस)
- शवों के उचित निपटान– मृत पशु दफन किया जा सकता है, जलाया जा सकता है, उचित उपचार के बाद बाइ–प्रोड्यूट्स/उप–पदार्थ में परिवर्तित कर सकते है, कंपोस्टिंग/उर्वरक बनाया जा सकता है।
- सफाई और कीटाणुशोधन
- टीका लगाना।
- कृत्रिम गर्भाधान का उपयोग करें।

lapkj j.kuhfr;ksa dk egRo

1. ग्रामीण समुदायों में सार्थक परिवर्तन करने के लिए एक अच्छी तरह से तैयार संचार योजना आवश्यक है।
2. इस प्रकार की संचार रणनीतियों का निर्माण करने की आवश्यकता है जिससे लोग अपनी स्थिति का अनुभव कर सके और खुद को परिस्थिति से जोड़ सके।
3. इस प्रकार की संचार रणनीतियों का निर्माण करने की आवश्यकता है जो जोखिम और लाभ बता सके।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. **पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम**
2. **पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)**
3. **निःशुल्क SMS सेवा**
4. **पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)**

पशुओं में पीलिया (जॉन्डिस) रोग

राजेंद्र यादव[1], अमित सांगवान[1], पंकज कुमार[2] एवं देवेंद्र सिंह[1]*

[1]हरियाणा पशु विज्ञान केंद्र, महेंद्रगढ़, [2]पशु रोग जाँच प्रयोगशाला, रोहतक

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

पशुओं में पीलिया रोग मनुष्यों की तरह एक यकृत (लिवर) सम्बन्धी व्याधि है, जो शरीर में बिलीरुबिन की अधिकता, पीले रंग की त्वचा एवं आँखों तथा शरीर से निकलने वाले द्रव्यों व स्रावों के पीलेपन के रूप में प्रकट होता है। पीलिया वास्तव में कोई एक रोग ना होकर यकृत तथा रक्त की विभिन्न बीमारियों का एक लक्षण है। पशुओं में पीलिया को तीन भागों में बांटकर देखा जा सकता है– रक्तालयी पीलिया (हिमोलिटिक जॉन्डिस), यकृत जनित पीलिया (हिपेटिक जॉन्डिस) एवं पित्त की थैली/नली जनित पीलिया (पोस्ट–हिपेटिक जॉन्डिस)।

i'kqvksa ihfy;k gksrk dSls gS\

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि पीलिया खुद एक रोग ना होकर पशु के शरीर में यकृत (लिवर) एवं रक्त से सम्बंधित अन्य विभिन्न रोगों का लक्षण है। इसलिए ऐसे बहुत से रोग हैं जिनकी वजह से पशुओं के शरीर में पीलिया के लक्षण दिखाई दे सकते हैं। पशुओं में होने वाले कई प्रकार के रक्त परजीवियों (बैबेसिओसिस, एनाप्लास्मोसिस, एपीथ्रोजुन इत्यादि), जीवाणु जनित रोग (लेप्टोस्पिरोसिस, बैसिलरी हिमोग्लोबिनूरिया इत्यादि), विषाणु जनित रोग (इक्वाइन इंफेक्सियस एनीमिया), कई बार कोई जहरीला पदार्थ खाने (ब्रकन फर्न, कॉपर की अधिकता इत्यादि) एवं शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली का खुद के ही रक्त के खिलाफ काम करना इत्यादि रोगों में पशुओं में रक्तालयी पीलिया (हिमोलिटिक जॉन्डिस) के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। ऐसी बहुत सी बीमारियां जिनमे पशुओं का यकृत (लिवर) सीधा एवं ज्यादा प्रभावित होता है उनमें यकृत जनित पीलिया (हिपेटिक जॉन्डिस) के लक्षण दिखाई देते हैं।

पीलिया गौवंशीय बछड़ों में विशेष रूप से यकृत (लिवर) की विशाक्तता के रूप में प्रकट होता है। पित्त की थैली की पथरी या पित्त नली का अवरोध अथवा गोलकृमि या पर्णकृमी नामक आंतरिक परजीवियों की यकृत में उपस्थिति के कारण पित्त की थैली/नली जनित पीलिया (पोस्ट–हिपेटिक जॉन्डिस) के लक्षण प्रभावित पशुओं में दिखाई देते हैं। पित्त नली में पित्त का बहाव उसके कठोर हो जाने के कारण प्रभावित होता है।

i'kqvksa esa ihfy;k ds y{k.k D;k&D;k gksrs gSa\

उपरोक्त दिए गए विभिन्न पीलियाकारक पशु रोगों के कारण प्रभावित पशु के शरीर में पित्त रंग जमा होने लगता है। पीलियाग्रस्त पशु की त्वचा एवं श्लेष्मा झिल्लियों का रंग देखने पर पीला दिखाई पड़ने लगता है। रोगग्रस्त पशु द्वारा विसर्जित मल/गोबर का रंग मिट्टी के रंग जैसा दिखाई देता है। इसके साथ–साथ पशु गहरे पीले रंग का मूत्र विसर्जन करता है। प्रभावित पशु में पाचन तंत्र के प्रभावित होने के कारण पशु की भूख भी कम होने लगती है। पीलिया रोग से प्रभावित पशु में भूख की कमी, पाचन की कमी एवं रक्त अल्पता के कारण पशु धीरे–धीरे कमजोर होने लगता है।

i'kqvksa esa ihfy;k dh igpku dSls djsa\

उपरोक्त बताये गए विभिन्न लक्षणों में से पशु में कोई भी लक्षण दिखाई देने पर पीलिया का प्रारम्भिक निदान किया जा सकता है। प्रभावित पशु में पीलिया रोग के निश्चित एवं मात्रात्मक निदान के लिए पशु–चिकित्सक खून की लिवर स्वास्थ्य सम्बन्धित विभिन्न प्रकार की प्रयोगशाला में जाँच करवाकर कर सकते हैं। इसके साथ–साथ पीलिया के प्रकार की पहचान करने के लिए भी विभिन्न पीलिया प्रकृति सम्बंधित जांचे भी करवाई जा सकती हैं।

i'kqvksa esa ihfy;k jksx dk mipkj dSls gksrk gS\

पशुओं में पीलिया वास्तव में कोई एक रोग ना होकर बल्कि यकृत (लिवर) तथा रक्त की विभिन्न प्रकार की बिमारियों का एक महत्वपूर्ण लक्षण है। अतः इसके उचित उपचार से पहले पशु–चिकित्सक प्रभावित पशु में पीलिया

*Corresponding author: drdev18@gmail.com

के लिए जिम्मेदार रोग का निदान करके उसका उचित इलाज करते है, क्योंकि पीलिया विभिन्न रोगों के कारण होने वाला एक लक्षण मात्र है। अतः इसके लिए जिम्मेदार जड़ कारण का उपचार करना बहुत जरूरी होता है। इसके साथ ही पीलिया की प्रकृति जानकर ही इसका उचित एवं पूरा उपचार किया जा सकता है।

पशुओं में पीलिया के उपचार के लिए पशु–चिकित्सक द्वारा बताई गई विभिन्न दवाइओं के अलावा पशु–चिकित्सक की सलाहनुसार पीड़ित पशु को शर्करा पूरित तथा वसा मुक्त आहार देना चाहिए। विभिन्न दवाइओं के अलावा पुनर्नवा/गंधपर्णा पौधे की जड़, आंवला, गिलोय इत्यादि का प्रयोग भी पीलियाग्रस्त पशु के लिए लाभकारी होता है। पशुपालकों को चाहिए कि पशुओं में पीलिया के उपचार के लिए पशु–चिकित्सक द्वारa बताई गई विभिन्न दवाओं का उचित मात्रा में बताई गई समय अवधी तक प्रयोग करना चाहिए तथा कोई भी दवा बिना पशु–चिकित्सक की सलाह के नहीं देनी चाहिए।

i'kqvksa esa ihfy;k jksx cpko dSls djsa\

पशुओं में पीलिया रोग की रोकथाम के लिए पशुपालकों को अपने पशुओं को साफ–सुथरा चारा एवं पानी देना चाहिए। पशुओं को संतुलित एवं उच्च गुणवत्ता वाला आहार देना चाहिए। पशुओं को विभिन्न प्रकार के जहरीले पौधे खाने से भी बचाना चाहिए क्योंकि इनके पशु के शरीर में जाने से सबसे पहले लिवर ही प्रभवित होता है। पशुओं को कोई भी दवाई देने से पहले पशु–चिकित्सक की सलाह अवश्य लेनी चाहिए क्योंकि लगभग सभी प्रकार की दवाइयां उचित मात्रा से ज्यादा एवं एक निश्चित समय अवधी से ज्यादा देने पर पशु के लिवर पर विपरीत प्रभाव डालती हैं। पशु–चिकित्सक की सलाहनुसार पशुओं को पेट के कीड़े मारने की दवाइयां एवं लिवर टॉनिक भी समय–समय पर देते रहनी चाहियें। इन सबके अतिरिक्त पशुपालकों को चाहिए की उनके पशु में पीलिया रोग के कोई भी लक्षण दिखाई देने पर तुरंत अपने पशु–चिकित्सक की सलाह लेकर उचित उपचार करवाएं।

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

भेड़ व बकरियों में काक्सीडियोसिस रोग (कुकडिया रोग)

सुमनिल मारवाह[1], रिक्की झाम्भ[2] एवं विनोद कुमार जैन[2]

[1]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, बीकानेर

[2]पशु औषधीय विज्ञान विभाग, लाला लाजपत पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि प्रधान देश हैं परन्तु कृषि के साथ पशुपालन भी एक प्रमुख व्यवसाय हैं। अल्प निवेश व कम संसाधनों में अधिक आर्थिक आय के कारण किसानों में बकरी व भेड़ पालन व्यवसाय अत्यधिक लोकप्रिय हुआ है। परन्तु इस व्यवसाय में सबसे बड़ा व्यवधान इन पशुओं में होने वाली स्वस्थ्य समस्याएं हैं। विभिन्न प्रकार के रोग भेड़ व बकरियों के स्वस्थ्य को प्रभावित कर उनकी उत्पादन क्षमता को कम करते हैं जिससे किसनों को आर्थिक नुकसान होता है। कोक्सीडीओसिस भी इस तरह का एक रोग हैं जिससे मेमनों में अधिक मृत्यु दर व शारीरिक विकास दर में कमी और वयस्कों में शारीरिक दुर्बलता हो जाती है। इस रोग की व्यापकता विश्व के लगभग सभी देशों में है।

jksx dk dkj.k

यह एक परजीवी रोग हैं जो आईमेरिया नामक प्रोटोजोआ के कारण होता हैं। यह परजीवी पशुओं की आंत में संक्रमण करते हैं। यह आंत की कोशिकाओं में विखंडन कर अपनी संख्या को बढ़ाते हैं और अंततः कोशिकाओं को नष्ट कर देते हैं। जिसके कारण आंत में घाव हो जाते हैं और खून का रिसाव भी होता है। स्वस्थ पशुओं में यह रोग रोगी पशुओं के संपर्क में आने से होता है। यह परजीवी मल में संक्रामक रूप में विसर्जित होता है और भोजन व पानी को दूषित कर देता है। अगर स्वस्थ पशु इस दूषित भोजन व पानी को ग्रहण करता है तो वह भी संक्रमित हो जाता है। यह अत्यधिक संक्रामक रोग हैं और एक समय में बाड़े में शत–प्रतिशत पशु इस रोग से प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हो सकते हैं।

y{k.k

यह रोग सभी आयु वर्ग को प्रभावित करता हैं परन्तु 3 से 6 माह के पशुओं में यह अधिक घातक होता हैं। इस आयु वर्ग में रोग के कारण मृत्यु दर सबसे अधिक होती हैं। इस रोग का मुख्य लक्षण दस्त हैं जो कि पतले व भूरे पीले रंग के होते हैं और उनमे रक्त भी पाया जा सकता है। दस्त के कारण पशु के शरीर में पानी की कमी हो जाती हैं जिसके कारण मृत्यु भी हो सकती है। भूख ना लगना, पेट दर्द, रक्ताल्पता, दुर्बलता, वजन कम होना इस रोग के अन्य प्रमुख लक्षण है। इसके अलावा संक्रमण के कारण मेमनों में शारीरिक वृद्धि रुक जाती हैं और चमक काम हो जाती है। रोग से मुक्त होने पर भी सामान्य शारीरिक वृद्धि पुनः प्राप्त नहीं होती।

funku

प्रभावित आयु वर्ग, संक्रमण दर व लक्षणों के आधार पर इस रोग का अनुमान लगाया जा सकता हैं। इसके अलावा मल जाँच व प्रभावित पशुओं का मरणोपरांत शव परिक्षण द्वारा निश्चित जाँच की जाती है।

jksdFkke o fu;a=.k

यद्यपि यह ''स्वत–सीमित'' रोग हैं परन्तु इसकी घातकता देखते हुए समय पर चिकित्सीय परामर्श आवश्यक हैं। इस रोग में प्रभावी चिकित्सा के अलावा रोग से बचाव हेतु रक्षात्मक औषधि भी दी जाती है। ऐम्प्रोलियम और सल्फा समूह की कुछ औषधियां जैसे सल्फामेथाजीन का उपयोग रक्षात्मक औषधि के रूप में किया जाता है। चिकित्सा के अलावा इस रोग की रोकथाम के लिए कुछ अन्य ध्यान देने योग्य बातें नीचे दी गयी है।

- व्यस्क पशु और मेमनों को अलग अलग बाड़ों में रखे और उनके चरने का स्थान भी अलग अलग हो।
- बाड़ों में सफाई का विशेष ध्यान दें। फर्श पर मल एकत्रित ना होने दें।
- पशुओं को जमीन पर दाना व चारा ना दे। अगर पशु चराई के लिए जाते हैं तो चराई मैदान को समय–समय पर बदलते हुए प्रयोग में लाये।
- रोगी पशुओं को अलग बाड़े में रखें।
- समय–समय पर मल जांच कराए। रोग की आशंका होने पर रक्षात्मक औषधि दे। सभी पशुओं को एक साथ दवा पिलाएं।

*Corresponding author: marwahasumnil828@gmail.com

सर्रा (ट्रिपानोसोमोसिस) : ऊँटों का एक प्रमुख रोग

सुमनिल मारवाह[1], काशीनाथ[1] एवं रिक्की झाम्भ[2]

[1]भाकृअनुप–राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र, बीकानेर

[2]पशु औषधीय विज्ञान विभाग, लाला लाजपत पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

''रेगिस्तान का जहाज'' कहा जाने वाला ऊँट विषम परिवेश में रहने वाला पशु हैं। आमतौर पर इनमें अन्य पशुओं की तुलना में बहुत कम रोग होते हैं। परन्तु फिर भी कुछ रोग है जो उनके स्वास्थ्य को प्रभावित कर उनकी कार्यक्षमता व उत्पादन–क्षमता को कम करते हैं। इन रोगों में सर्रा (ट्रैपेनोसोमोसिस) सबसे प्रमुख रोग हैं। ऊँटों में यह रुग्णता और मृत्यु दर के प्रमुख कारण है क्योंकि यह एक चिरकालिक रोग है। इसलिए इसे ''तिबरसा'' भी कहते हैं। इसे प्रचलित भाषा में ''गलतिया रोग'' भी कहते हैं। इस रोग में शारीरिक रूप से अत्यधिक कमजोर हो जाता है, इसीलिए इसे ''सर्रा'' कहते हैं। यह रोग पशुओं में शारीरिक दुर्बलता तो करता ही हैं साथ ही उनकी रोग प्रतिरोधकता भी कम करता हैं जिससे पशु अन्य रोगों के प्रति संवेदनशील हो जाता है। समय रहते अगर इस रोग का उपचार ना किया जाये तो पशु की मृत्यु भी हो जाती हैं। इसलिए इस रोग की गंभीरता को देखते हुए इस रोग का निदान अति महत्वपूर्ण है।

dkj.k

यह एक परजीवी रोग हैं जो कि ''ट्रिपेनोसोमा ईवांसी'' नामक प्रोटोजोआ से होता हैं। यह परजीवी पशु के रक्त में पाया जाता है। इस रोग का प्रसार रक्त चूसने वाली मक्खियों के काटने से होता हैं जिसमें टैबेनस, स्टोमोक्सिस, हिमेटोपोटा प्रमुख प्रजातियां हैं। यह मक्खियाँ रोगी पशु से रक्त के साथ परजीवी ग्रहण कर लेती हैं और जब वे स्वस्थ पशु में रक्तपान करती हैं तो उनमें परजीवी को छोड़ देती हैं। रक्त में जाकर यह परजीवी रक्ताल्पता पैदा करता है। वैसे तो यह रोग पूरे वर्ष भर पाया जाता है परन्तु बरसात के मौसम में मक्खियों का प्रभाव अधिक होने के कारण से इस रोग का प्रकोप वर्षा ऋतु में अधिक होता हैं।

y{k.k

यह एक चिरकालिक रोग हैं तथा सामान्यतः शुरूआत में यह लक्षण विहीन होता है। परन्तु कुछ समय बाद इस रोग के लक्षण स्पष्ट दिखाई दते हैं, जिनमें बुखार, रक्ताल्पता और शारीरिक दुर्बलता प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग में बुखार निरंतर ना रह कर एक दो दिन के अंतराल पर होता है। लम्बे समय तक चलने वाले इस रोग में पशु अत्यधिक दुर्बल हो जाता हैं, उसका कूबड़ गायब होने लगता हैं और मांसपेशियों का अपक्षय होने लगता है। अत्यधिक रक्ताल्पता के कारण कभी–कभी पशु में श्वास सम्बन्धी परेशानियां भी हो सकती है। कई बार इस रोग में पशु के शरीर के निचले हिस्से में पानी एकत्रित होने से सूजन भी हो जाती हैं। इस रोग में कोर्निआ में धुंधलापन आ जाता हैं और पशु को कम दिखाई देने लगता है। गर्भवती मादा पशुओं में इस रोग के कारण गर्भपात भी हो सकता हैं। इस रोग में पशु की रोग प्रतिरक्षा क्षमता कम हो जाती हैं

ljk l çHkkfor ÅV ¼'kkjhfjd :i l vR;f/kd detkj½

*Corresponding author: marwahasumnil828@gmail.com

जिससे वह अन्य रोगों से भी जल्दी प्रभावित होते हैं और बार–बार बीमार होते हैं।

funku

इस रोग का निदान रक्त–परीक्षण द्वारा किया जाता हैं। इसके लिए ताजा रक्त के नमूने में या अभिरंजित रक्त स्मीयर में सूक्ष्मदर्शी परीक्षण द्वारा ट्रिपेनोसोमा ईवांसी परजीवी की पहचान की जाती हैं। पीसीआर या सीरम आधारित कुछ अन्य जाँच जैसे एलिसा द्वारा भी इस रोग की पहचान की जा सकती है।

mipkj ,oa fu;a=.k

- इस रोग में बचाव हेतु कोई टीका विकसित नहीं हुआ हैं। वर्तमान में इस रोग का नियंत्रण रसायन रोग निरोध द्वारा किया जाता है जिसमें पशुओं को रक्षात्मक औषधि दी जाती है। बरसात के मौसम में इस रोग की आशंका अधिक रहती है इसलिए इस मौसम की शुरूआत में ही पशुचिकित्सक की सलाह से पशुओं को रसायन रोग निरोधी दवा दी जनि चाहिए।
- इस रोग का संचरण मक्खियों द्वारा होता हैं इसलिए इनका नियंत्रण भौतिक या रासयनिक तरीके से किया जाना चाहिए। रोग की रोकथाम करने के लिए यह सबसे आवश्यक है। ऊँटों के बाड़े में साफ–सफाई रखनी चाहिये। बाड़े में व आसपास कीटनाशक का छिड़काव करना चाहिए।
- पशुओं में इंजेक्शन लगाते समय हर पशु के लिए नयी सुई का इस्तेमाल करें क्योंकि इस परजीवी का संचरण संक्रमित सुई के द्वारा भी होता है।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857 (पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

चूजों में सेक्सिंग प्रक्रिया

स्मृति शर्मा[1] एवं रविंदर[2]

[1]पशु आनुवंशिकी और प्रजनन विभाग, [2]पशु पोषण विभाग,

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा और पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार–125004, हरियाणा

चूजा सेक्सिंग मुर्गियों और अन्य हैचलिंग के लिंग को अलग करने की विधि है, आमतौर पर एक प्रशिक्षित व्यक्ति जिसे चिक सेक्सर या चिकन सेक्सर द्वारा किया जाता है। ज्यादातर बड़ी व्यावसायिक हैचरी मादा चूजों या 'पुललेट्स' (अंडे देने के लिए) को नर या 'कॉकरेल' से अलग करने के लिए चिकन सेक्सिंग का अभ्यास करती हैं (उनमें से ज्यादातर अंडे के उत्पादन के लिए अप्रासंगिक होने के कारण अंडे सेने के दिनों के भीतर मारे जाते हैं)। व्यावसायिक भूमिकाओं के लिए, बड़ी संख्या में मादा और सीमित संख्या में नर को विभिन्न आहार कार्यक्रमों में रखा जाता है। पोल्ट्री उद्योग के विभिन्न वर्गों को विभिन्न कारणों से चिक सेक्सिंग की आवश्यकता होती है। अंडे देने वाले खेतों में नर अवांछित होते हैं; मांस उत्पादन के लिए, टेबल के लिए बेचे जाने वाले संकर पक्षियों के उत्पादन के लिए प्रजनन के लिए अलग–अलग नर और मादा लाइनों को बनाए रखा जाता है, और किसी भी पंक्ति में गलत लिंग के चूजे अवांछित होते हैं। ब्रीडर की लागत कम करने के लिए अवांछित सेक्स के चूजों को लगभग तुरंत ही मार दिया जाता है।

pwtk lsDl djus ds rjhds

एक दिन के चूजे के लिंग का निर्धारण करने के लिए कई विधियों का उपयोग किया जाता है। कुछ केवल कुछ नस्लों या क्रॉस के साथ प्रभावी होते हैं, जबकि अन्य सार्वभौमिक होते हैं। चूजों को सेक्स करने के दो मुख्य तरीके हैं पंख सेक्सिंग और वेंट सेक्सिंग।

oSV lsfDlax& वेंटिंग, जिसे केवल वेंट सेक्सिंग के रूप में भी जाना जाता है, में चूजे के मल को निचोड़ना शामिल है, जो चूजे के गुदा वेंट (जिसे क्लोका कहा जाता है) को थोड़ा खोल देता है, जिससे चिकन सेक्सर को यह देखने की अनुमति मिलती है कि क्या चूजे के पास एक छोटा उभार है जो इंगित करेगा कि चूजा नर है। कुछ मादाओं में भी उभार होते हैं, हालांकि वे बहुत कम होते हैं लेकिन नर चूजों की तरह बड़े नहीं होते।

श्रेष्ठता या जननांग अंग वेंट के निचले रिम पर आधे रास्ते में देखा जाता है और एक बहुत छोटा दाना जैसा दिखता है। अधिकतम नर में असाधारण रूप से प्रमुख उभार है, अधिकतम मादाओं के पास कोई नहीं है। मुर्गियों के साथ संभोग करना सीखते समय, यह अपेक्षा करना पहली दर है कि छोटी श्रेष्ठता वाले मुर्गियां मादा हैं। नर प्रधानता मजबूत है और अपने अंगूठे से हल्के से रगड़ने पर गायब नहीं होगी।

वेंट सेक्सिंग को जापान में विकसित किया गया था और 1930 के दशक में इसे उत्तरी अमेरिकी पोल्ट्री उत्पादकों के पास ले जाया गया था। वेंट सेक्सिंग एक ऐसी क्षमता है जिसे बढ़ने में लंबा समय लगता है। इसमें एक हाथ से चूजे को दूसरी तरफ ऊपर उठाना, मल को बाहर निकालना और वेंट क्षेत्र को उल्टा करना (बाहर की ओर मुड़ना) शामिल है। चरित्र तब अल्पविकसित नर यौन अंग की उपस्थिति या अनुपस्थिति की खोज कर सकता है। यह तकनीक वास्तव में जितनी सरल है, उससे कहीं अधिक सरल लगती है। इस तरह से चूजों को उचित रूप से सेक्स करने के लिए, व्यक्ति ठीक से शिक्षित होना चाहिए और उसके पास एक उत्कृष्ट अभ्यास होना चाहिए।

Qnj lsfDlax& सेक्स–लिंक्ड स्लो–फेदरिंग जीन का उपयोग क्रॉस में किया जा सकता है, जहां पंखों की लंबाई से चूजों के लिंग का पता लगाया जा सकता है। तेजी से पंख वाले नर और धीमी पंख वाली मादा के बीच एक क्रॉस का परिणाम चूजों में होता है जिसमें मादाओं के प्राथमिक पंख होते हैं जो कि आवरणों की तुलना में काफी लंबे होते हैं। नर चूजों के छोटे प्राथमिक पंख होते हैं, लगभग समान लंबाई के आवरण के समान।

gpjh esa pwtksa dh Qnj lsfDlax

- हैचरी में दिन–ब–दिन चूजों को सेक्स के आधार पर

*Corresponding author: smritisharma18181@gmail.com

छांटना महत्वपूर्ण है।

- आगे के चयन के लिए मादा की पहचान करना।
- अलग–अलग नर और मादा ब्रॉयलर को उनकी अलग–अलग आवश्यकताओं के अनुसार प्रबंधित करने के लिए।

उदाहरण के लिए, रोड आइलैंड रेड और न्यू हैम्पशायर नस्लों को हैचिंग के समय पंखों के रंग को देखकर सेक्स किया जा सकता है। नर चूजों में विंग वेब के नीचे सफेद धब्बे देखे जा सकते हैं। जब चूजे नीचे का पंख झड़ जाता है और पंखों से बदल दिया जाता है तो यह स्थान खो जाता है। लेकिन इस तरह से सेक्स करना हमेशा सटीक नहीं होता क्योंकि स्पॉट के आकार में काफी सामान्य भिन्नता होती है।

बैरड प्लायमाउथ रॉक नस्ल में बैरिंग (बी) के लिए एक जीन होता है जो जेड क्रोमोसोम पर मौजूद है। यह जीन अन्यथा काले पंख पर एक सफेद पट्टी पैदा करता है। गैर–प्रतिबंधित जीन (बी) पर जीन अपूर्ण रूप से प्रभावशाली है। वयस्कों में, दो बैरिंग जीन (बीबी) वाले नर में मादा की तुलना में व्यापक सफेद पट्टियों वाले पंख होते हैं, जिनके पास केवल एक बैरिंग जीन (बी–) होता है। नतीजतन, मादा का रंग समग्र रूप से हल्का होता है। प्योरब्रेड बैरड प्लायमाउथ रॉक्स चूजों का लिंग सिर के शीर्ष पर हल्के रंग के स्थान के आकार और आकार के आधार पर निर्धारित किया जा सकता है। हैच पर बड़े सफेद धब्बे नर में मौजूद होते हैं। मादा में, स्थान बहुत छोटा और संकरा होता है। यह लगभग 80% सटीक पाया गया है।

oV lfDlx dh r|yuk e| ykHk&

- लोगों को अच्छी गति और सटीकता के साथ जल्दी से सेक्सिंग करने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है।
- फेदर सेक्सिंग तेज गति से की जा सकती है (प्रति व्यक्ति प्रति घंटे 4,500 चूजे तक)।
- संक्रमण की संभावना कम और लागत प्रभावी।

vU; rjhd

dyj lfDlx& सेक्स–लिंक्ड सिल्वर/गोल्ड जीन का इस्तेमाल नवजात चूजों को सेक्स करने के लिए भी किया जा सकता है। नर के साथ संभोग करने वाली मादाएं संतान को जन्म देती हैं, मादाओं का रंग गहरा, चमड़े का नीचे का रंग होता है, और नरों का रंग हल्का, सफेद रंग का होता है। जब तक अन्य रंगों (अन्य जीनों द्वारा नियंत्रित) द्वारा छुपाया नहीं जाता है, चूजों को बहुत कम या बिना प्रशिक्षण के सटीक रूप से सेक्स किया जा सकता है।

v,Vk& lfDlx uLy& 1930 में, दो अंग्रेजी आनुवंशिकीविदों ने नस्ल के क्रॉस पर निर्भर किए बिना बच्चे के चूजों की लिंग पहचान के लिए सेक्स लिंकेज के सिद्धांत को विस्तृत किया। इस विधि को ऑटोसेक्सिंग के रूप में जाना जाता है, इसमें एक शुद्ध–प्रजनन किस्म या मुर्गियों में कुछ अन्य जीनों के साथ एक सेक्स–लिंक्ड जीन–बारिंग जीन शामिल है। नर में दो जीन होते हैं जो मादा में एक को छोड़कर जीन की तुलना में अन्य जीनों की क्रिया द्वारा चिक डाउन पंखों में व्यक्त रंग या पैटर्न को अधिक गंभीर तरीके से संशोधित करते हैं। यह विधि एक शुद्ध प्रजनन किस्म के विकास को सक्षम बनाती है जिसमें लिंग लगातार अंडे सेने पर अलग दिखाई देते हैं। मुर्गियों में कुछ विरासत में मिले लक्षण जिनके साथ बैरिंग जीन ऑटोसेक्सिंग देने के लिए परस्पर प्रभाव डालते हैं, वे हैं समानांतर पेंसिलिंग, एक धारीदार चिक डाउन पैटर्न और एंकोना जैसी धब्बेदार नस्लों का डाउन पैटर्न।

leh&v,Vk& lfDlx uLy& नव रचित बार्ड रॉक्स, रोड आइलैंड रेड्स, और न्यू हैम्पशायर रेड्स को निष्पक्ष सटीकता के साथ स्पष्ट रूप से सेक्स किया जा सकता है। वर्जित चट्टानों के साथ, नर में एक बड़ा, सिर पर विशिष्ट सफेद धब्बा वाला स्थान और पीले पैर होते हैं जबकि मादा के पास एक छोटा, कम अच्छी तरह से परिभाषित सिर पर धब्बे वाला स्थान और गहरे रंग के पैर होते हैं। रोड आइलैंड रेड और न्यू हैम्पशायर रेड चिक्स चिपमंक धारियों के साथ ज्यादातर मादा में हैं।

ofdYid rjhd& छोटे पैमाने के कुक्कुट मालिक चिकन सेक्सर का खर्च नहीं उठा सकते हैं, इसलिए पात्रों में देखने योग्य अंतर प्राप्त करने के लिए 4–6 सप्ताह की लंबी अवधि के इंतजार से बचने के लिए, चूजों को सेक्स करने के कुछ वैकल्पिक तरीकों का प्रावधान है।

bu&vkok lfDlx& हैचिंग से बहुत पहले विकासशील चूजे के लिंग का निर्धारण करने के लिए स्वचालित सिस्टम की घोषणा की गई है लेकिन व्यापक रूप से तैनात नहीं किया गया है। 2017 में 14–दिवसीय इन–ओवो प्रयोग में 97% की उच्च सटीकता की सूचना दी गई थी। सिस्टम कैंडलिंग अंडे पर निर्भर करता है और पंखों के रंग को

निर्धारित करने के लिए स्पेक्ट्रोस्कोपी का उपयोग करता है और इसलिए केवल सेक्स से जुड़े पंखों के रंग के साथ उपभेदों के लिए उपयुक्त है।

e'khu lfDlx& मशीन सेक्सिंग के उपकरण और स्पेयर पार्ट्स की अनुपलब्धता के कारण व्यापक रूप से उपयोग नहीं किया जाता है। कीलर ऑप्टिकल (अंग्रेजी) या चिक टेस्टर (जापानी) मशीन में एक ब्लंट–एंडेड टेलीस्कोपिक ट्यूब होती है, जिसमें एक प्रकाश होता है। चिकन सेक्सर ट्यूब को खाली किए गए क्लोअका में डालता है और प्रकाश की मदद से वृषण या अंडाशय की पहचान कर सकता है।

fu"d"k& अधिकांश जानवरों के साथ, नवजात शिशु के लिंग का निर्धारण करना अपेक्षाकृत आसान होता है। नर प्रजनन अंग शरीर के बाहर स्थित होते हैं और नवजात शिशुओं में भी देखने में अपेक्षाकृत आसान होते हैं। मुर्गी के साथ ऐसा नहीं है। नर पक्षियों में, प्रजनन अंग शरीर गुहा के अंदर होते हैं। इससे नव चूजों का सेक्स करना मुश्किल हो जाता है। इसलिए, अंडे के उत्पादन या मांस उत्पादन जैसे विभिन्न उद्देश्यों के लिए या ब्रीडर झुंड के रूप में विकसित करने के लिए चूजों को जल्द से जल्द सेक्स करने के लिए चिक सेक्सिंग के विभिन्न तरीकों का विकास किया गया।

विस्तार शिक्षा की विभिन्न गतिविधियों (ट्रेनिंग आदि) के लिए पशु विज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	पशु विज्ञान केन्द्र
1.	पशु विज्ञान केन्द्र, फ्रैन्डस कॉलोनी, नजदीक करनाल बाई पास चौक, कैथल
2.	पशु विज्ञान केन्द्र, वैटेनरी पोली क्लीनिक, सोनीपत
3.	पशु विज्ञान केन्द्र, पांडु पिंडारा, जींद
4.	पशु विज्ञान केन्द्र, सिरसा
5.	पशु विज्ञान केन्द्र, भिवानी
6.	पशु विज्ञान केन्द्र, रोहतक
7.	पशु विज्ञान केन्द्र, युगल विहार (दाहलीवास) रेवाड़ी
8.	पशु विज्ञान केन्द्र, नजदीक मिनी सैक्ट्रेट, गुड़गांव
9.	विस्तार शिक्षा निदेशालय, लुवास, हिसार
10.	पशु विज्ञान केन्द्र, अम्बाला

डेयरी पशु प्रबंधन

शिवेंद्र अग्रवाल[1] एवं सरिता कौशल[2]
पशुचिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश

डेयरी पशुओं के प्रबंधन का सीधा प्रभाव डेयरी की स्थिरता एवं लाभप्रदता पर पडता है, अर्थात् जितना अच्छा पशु प्रबंधन उतनी लाभदायक और स्थाई डेयरी।

डेयरी का प्रभावशाली प्रबंधन 2 पहलू पर निर्भर करता है–

1. उत्तम किस्म की पशु नस्ल और पशु की प्रजनन क्षमता।
2. अच्छी उत्पादकता प्राप्त हो इसके लिए पशुओं को उनका उचित वातावरण प्रदान करना। इसके लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग पशुओं के खान–पान आवास और स्वास्थ को बनाए रखने में करना चाहिए।

विगत कई वर्षों से अपने देश भारत का दुग्ध उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान है। 2020–21 में भारत में कुल दुग्ध उत्पादन 209.96 मिलियन टन एवं प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 427 ग्राम प्रतिदिन है। देश में गायों की कुल संख्या वर्ष 2019 में 192.49 मिलियन एवं भैसों की कुल संख्या वर्ष 2019 में 109.85 मिलियन है। देश में कुल पशुधन की आबादी, 535.78 मिलियन है।

हालांकि विश्व में सबसे अधिक पशु संख्या होने के बावजूद प्रति पशु दुग्ध उत्पादकता अन्य देशों की अपेक्षा काफी कम है, जिसे वैज्ञानिक विधि से डेयरी पालन द्वारा काफी हद तक बढ़ाए जाने की संभावना है।

डेयरी व्यवसाय की सफलता मुख्यता दुधारू पशुओं पर निर्भर करती है। इसलिए दुधारू पशुओं का रखरखाव उनका निवास स्थान, खानपान एवं स्वास्थ्य प्रबंधन समुचित होना चाहिए, ताकि पशुपालक अपने दुधारू पशु से उसकी पूरी क्षमता से दूध उत्पादन एवं प्रजनन ले सके और डेयरी व्यवसाय से अधिक से अधिक लाभ उठा सकें। पशु का निवास स्थान स्वच्छ एवं आरामदायक होना चाहिए, जिससे वातावरण के उतार चढ़ाव एवं बदलाव का पशु की किसी भी प्रकार की क्रिया एवं उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। पशु आवास के क्षेत्र में छायादार पेड़ों का होना अति आवश्यक है, क्योंकि पेड़ ही पहले माध्यम है जो वातावरण में उतार–चढ़ाव से पशु को बचाते हैं। पशु को रखने का स्थान मौसम के हिसाब से बदलते रहना चाहिए। गर्मी में पशु को छाया में, बरसात में हवादार स्थान पर एवं सर्दी में बंद मकान में रखना चाहिए ताकि उसे सर्दी ना लगे। ऐसा करने से पशु का स्वास्थ्य भी ठीक रहता है एवं पशु आहार भी ठीक मात्रा में खाता है और दूध उत्पादन पर कोई प्रतिकूल असर नहीं पड़ता है।

एक दुधारू गाय के लिए 3.5 वर्ग मीटर क्षेत्रफल का ढका हुआ तथा 7.0 वर्ग मीटर का खुला हुआ स्थान होना चाहिए। इसी प्रकार एक दुधारू भैंस के लिए 4 वर्ग मीटर क्षेत्रफल का ढका हुआ तथा 8 वर्ग मीटर का खुला हुआ स्थान होना चाहिए तथा निवास स्थान की ऊंचाई, मध्यम ऊंचाई के पशु से 175 सेंटीमीटर तथा 220 सेंटीमीटर क्रमशः मध्यम तथा अधिक वर्षा वाले क्षेत्र में और शुष्क क्षेत्र में होनी चाहिए। यदि सभी दुधारू पशु एक साथ एक ही बाड़े में खुले रखे गए हैं, तो ऐसी स्थिति में एक बाड़े में पशुओं की संख्या 50 से अधिक नहीं होनी चाहिए अन्यथा अधिक संख्या में न तो पशु को आहार उचित मात्रा में मिलेगा और नहीं पशु को आराम मिल सकेगा। पशु के बैठने का स्थान ऐसा होना चाहिए, जिस पर पशु फिसल ना सके तथा मूत्र व गंदे पानी की निकासी के लिए "यू " आकार की 20 सेंटीमीटर चौड़ी नाली होनी चाहिए। सर्दी के मौसम में पशु को आराम देने के लिए बिछावन का विशेष प्रबंध करना चाहिए। ऐसा करने से पशु की उत्पादकता बढ़ेगी और साथ ही साथ बीमारियां भी कम होंगी।

vkgkj 0;oLFkk

दुधारू पशुओं को स्वच्छ ताजा पानी पिलाना चाहिए। पशु की पानी की आवश्यकता वातावरण की दशा एवं उसको दिए गए आहार पर निर्भर करती है। हरे चारे में पानी

*Corresponding author: ag123shiv@gmail.com

की मात्रा अधिक होने से पशु कम पानी पीते हैं परंतु दुधारू पशुओं को गर्मियों में कम से कम 4 बार एवं सर्दी में 2 बार ताजा पानी जरूर पिलाएं। सूखे एवं हरे चारों को मिलाकर देना चाहिए, विशेषकर जब बरसीम की पहली या दूसरी कटाई पशु आहार के लिए की गई हो क्योंकि इस परिस्थिति में बरसीम के पौधे में प्रोटीन एवं पानी की मात्रा ज्यादा होती है और इनमें सैलूलोज की मात्रा कम रहती है। इस स्थिति में हरे चारे से पशु को अफारा होने की संभावना अधिक होती है तथा कभी–कभी बिना पचा हुआ हरा चारा पतले दस्त के रूप में गोबर के माध्यम से निकलता है, इसीलिए प्रत्येक दुधारू पशु के हरे चारे में कम से कम 20 प्रतिशत सूखा चारा होना अति आवश्यक है और यदि कम सूखा चारा पशु को दिया जाता है, तब पशु के दूध में वसा की मात्रा कम होने की प्रबल संभावना रहती है।

सामान्यतः यह देखने में आता है कि अधिकांश पशुपालक अपने पशुओं को खनिज लवण एवं नमक आहार में नहीं देते हैं। खनिज लवण एवं नमक दुधारू पशुओं में देना आवश्यक है। यदि यह पशु को आहार के माध्यम से नहीं दिए गए तो पशु स्वास्थ्य एवं प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव डालेगा। जिन पशुओं को खनिज लवण नहीं दिया जाता, ऐसे पशुओं का दूध उत्पादन कम होता है और पशु गर्मी या मद मे कम आते हैं। दुधारू गायों को प्रति 2.5 किलोग्राम दूध एवं भैंस को प्रति 2.0 किलोग्राम दूध के लिए 1 किलोग्राम दाना देना चाहिए। यदि पशु गर्भित है, तब इस स्थिति में अतिरिक्त दाना गर्भधारण राशन के रूप में पशुपालक अपने पशुओं को अवश्य दें।

n/kk: i'kqvksa dk LokLF; ,oa j[kj[kko

दुधारू पशुओं का रखरखाव अन्य श्रेणी के पशुओं से अलग है क्योंकि थोड़ी सी असावधानी दुधारू पशुओं के उत्पादन पर सीधा प्रभाव डालती है, इसलिए पशुपालक निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें–

- पशु का निवास स्थान स्वच्छ एवं हवादार होना चाहिए, तथा उसके मल मूत्र को निकालने का विशेष ध्यान देना चाहिए। बैठने के स्थान को फिनायल के घोल से धोना चाहिए, इससे बीमारी फैलाने वाले कीटाणुओं की संख्या कम रहेगी तथा थनों के रोग कम होंगे।
- दूध दुहने से पहले दुधारू पशु की साफ–सफाई जरूर करें, इससे पशु में स्वच्छता तो रहेगी ही, साथ ही साथ उसके शरीर में परजीविओं का प्रकोप भी कम रहेगा।
- दुधारू पशु को आहार के बाद आराम करने के लिए अलग स्थान होना चाहिए, जहां पर पशु आराम कर सके। यदि यह संभव नहीं है, तब पशु के बैठने के स्थान की सफाई एवं सूखे रखने का विशेष ध्यान देना चाहिए।
- पशुपालकों को दुधारू पशु का समय–समय पर संक्रामक रोगों से बचाने के लिए टीकाकरण कराना चाहिए।
- दुधारू पशुओं के खुरों का विशेष ध्यान देना चाहिए, अन्यथा पशु खुरों के विकारों से पीड़ित होगा। इन विकारों से पशु कम खाता है और कमजोर हो जाता है।
- दूध दुहने के सही तरीके से दूध दुहना चाहिए, इससे प्रत्येक गाय या भैंस के उत्पादन में 10 से 15 प्रतिशत की बढ़ोतरी होगी।
- दुधारू पशु का एक भी मद या गर्मी चक्र खाली नहीं जाना चाहिए और कम से कम ब्याने के 60 से 85 दिन में दुधारू पशु को गर्भ धारण कर लेना चाहिए।
- दुधारू पशु को अगले ब्यांत की सुरक्षा एवं अधिक उत्पादन के लिए, 2 महीने का शुष्क समय अर्थात् ड्राई पीरियड अवश्य देना चाहिए, क्योंकि इस आहार से मिलने वाली शक्ति गर्भाशय में बच्चे की बढ़ोतरी एवं पशु के अगले ब्यांत में दूध की क्षमता को बनाए रखने के लिए प्रयोग होती है।

गाय, भैंस, भेड़, बकरी और सुअर पालकों के लिए मुँह-खुर रोग से संबंधित जानकारी

रितु पंघाल, अनिता दलाल*, स्वाति दहिया
पशु सूक्ष्मजीवी विज्ञान विभाग
लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

मुँह–खुर रोग पशुओं का एक गंभीर संक्रामक रोग हैं जो विषाणु के कारण होता है। अंग्रेज़ी में इसे 'फुट एण्ड माउथ डिसीज' के नाम से जाना जाता है। यह रोग समस्त फटे खुर वाले पशुओं जैसे गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सुअर आदि तथा अन्य जंगली जानवरों में पाया जाता है।

विषाणु–मुँह–खुर रोग विषाणु/फुट एण्ड माउथ डिसीज वायरस इस रोग का कारण है। इस विषाणु के सात प्रकार होते है। भारत में मूल रूप से ओ, ऐ, एशिया–1 नामक तीन प्रकार के मुँह–खुर रोग विषाणु पाए जाते हैं जो प्रतिरक्षात्मक रूप में एक–दूसरे से भिन्न होते हैं।

jksx lapj.k& रोगी पशुओं के साँस, लार, दूध, रक्त, मूत्र, मल तथा वीर्य में विषाणु पाए जाते हैं। रोग ग्रस्त पशुओं के संपर्क में आने तथा संदूषित चारा खाने अथवा पानी पीने से स्वस्थ पशुओं में यह बिमारी फैलती है। विभिन्न किस्म के संदूषित निर्जीव वस्तुएं जैसे वाहन, कपड़े आदि से भी यह रोग फैलता है। अनुपचारित दूषित मांस उत्पादों के सेवन, दूषित वीर्य से गर्भाधान व दूषित दूध के सेवन (नवजात पशुओं द्वारा) से भी रोग का संचार होता है। रोग ग्रस्त इलाके से लाया संदूषित चारा, मांस, एवं रोग ग्रस्त पशु भी इस विषाणु के आवश्यक स्त्रोत हैं।

jksx ds y{k.k ,oa fo'ks"krk,& रोग के लक्षण विषाणु संक्रामण के 2 से 14 दिनों के बाद दिखाई देते हैं एवं यह रोग गाय और सुअर को अधिक गंभीर रूप से प्रभावित करता है। युवा पशुओं में होने वाली क्षति अधिक होती है एवं मृत्यु दर 50 प्रतिशत तक पहुँचा सकती है जब यह विषाणु हृदय की मांसपेशियों पर हमला करता है। जबकि अधिक उम्र वाले पशुओं में मृत्यु दर 5 प्रतिशत या और भी कम होता है। हालांकि दूध उत्पादन में कमी, शारीरिक निर्बलता एवं गर्भपात के कारण होने वाली क्षति काफी अधिक होती है।

*Corresponding author: dranitadalal@gmail.com

पीड़ित पशु के खुर के बीचों–बीच, थूथन तथा मुँह में छालों का होना, पशु का लंगड़ाना, बुखार व मुँह से लगातार लार टपकना आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं। पशुओं में विशेष प्रकार की चप–चप आवाज़ का अनुभव भी किया जाता है जब रोगी पशु मुँह को खोलता एवं बंद करता है।

मुँह एवं खुरों में हुए फफोलों का पहले विकास होता है, पकते–फूटते है एवं अंत में घाव बनकर भरने लगते है। इस दौरान वहाँ सूजन, लालीमा तथा दर्द का अनुभव होता है जिसके कारण पशु खाना–पीना छोड़ देता है एवं चलने फिरने में कष्ट का अनुभव करता है।

jksx dk funku

- रोगी पशुओं के लक्षणों द्वारा।
- विषाणु की पुष्टि निदान के लिए फफोले की खाल या द्रव, रक्त, दूध आदि रोगग्रस्त जानवरों से एकत्र किए जा सकते हैं एवं प्रयोगशाला में जाँच के लिए भेजे जा सकते हैं।
- प्रयोगशाला में आधुनिक तकनीक (ELISA) का उपयोग करके–
  - विषाणु के प्रकार का पता लगाया जा सकता है।
  - टीकाकरण पश्चात् पशुओं में विषाणु के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता को SPC-ELISA द्वारा पता लगाया जा सकता है
  - संक्रमित और टीकाकरित पशुओं का विभेदन करने के लिए NSP-ELISA/DIVA लगाया जाता है।

jksx dk mipkj& प्रभावित पशुओं को तुरन्त अन्य पशुओं से अलग कर देना चाहिए। मुँह के घावों पर ग्लिसरीन लगाया जा सकता है। प्रभावित पशुओं के मुँह एवं खुरों के घावों को धोने के लिए नीचे दिए गए घोल का दिन में 3–4 बार उपयोग किया जा सकता है–

eqg d fy,& 1% लाल दवाई/पोटाशियम परमैंगनेट (1 ग्राम प्रति लीटर पानी में) अथवा,

फिटकरी (5 ग्राम प्रति लीटर पानी में) अथवा,

बोरिक एसिड (15 ग्राम प्रति लीटर पानी में) अथवा,

0.5–1% बेकिंग सोडा/सोडियम बाइकार्बोनेट (1 ग्राम प्रति लीटर पानी में)

[kjk d fy,& 1% लाल दवाई/पोटाशियम परमैंगनेट (1 ग्राम प्रति लीटर पानी में) या,

0.5–1% बेकिंग सोडा/सोडियम बाइकार्बोनेट (1 ग्राम प्रति लीटर पानी में) या,

फिनाइल (40 मि.ली. प्रति लीटर पानी में) या,

2% कॉपर सल्फेट (2 ग्राम प्रति लीटर पानी में)

खुरों के घाव को धो कर साफ करने के बाद एंटीसेप्टिक क्रीम लगानी चाहिए। पशु चिकित्सक से परामर्श के बाद ज्वरनाशक और दर्द निवारक दवाइयाँ पशुओं को दी जा सकती हैं।

mipkj d dN?kjyw mik;&

- 10–10 ग्राम जीरा, मेथी व काली मिर्च को एक घंटे 100 मिली लीटर पानी में भिगोने के बाद हल्दी (10 ग्राम) एवं लहसुन (4 पोथी) पीस लें। इसमें गुड़ (125 ग्राम) एवं नारियल (कसा हुआ) मिला लें। ऐसी खुराक दिन में तीन बार ताजा बनाकर पशुओं को पाँच दिनों तक खिलानी चाहिए।
- चावल का माण्ड (2 किलो) एवं पुराना गुड (1 किलो) मिलाकर या सफेद तिल को पानी में पीसकर पिलाने से बुखार में आराम आता है।
- लहसुन (10 ग्राम), हल्दी (20 ग्राम) एवं एक–एक मुट्ठी नीम, मेंहदी व तुलसी के पत्तों को 250 ग्राम नारियल के तेल में उबालकर ठंडा करने के बाद खुरों के घावों पर ठीक होने तक उपयोग किया जा सकता है।
- सुहागा को गरम करने के पश्चात् उसमें कपूर एवं शहद मिलाकर मुँह के छालों पर लगाने से पशु को राहत मिलती है।
- नीम की पत्तियों को पानी में पीसकर छालों पर लगाने से आराम मिलता है।
- बबूल, ढाक, जामुन, आँवला एवं नीम की छाल का समान मात्रा में पानी में काढ़ा बनाकर छालों को धोने के लिए।
- अलसी का तेल याहल्दी व नीम की पत्तियों का लेप खुरों के छालों पर उपोग से राहत मिलती है।

fu;a=.k vkj jkdFkke& यह रोग पशुधन उद्योग को भारी आर्थिक नुकसान पहुँचाने के लिए जिम्मेदार हैं जिसके कारण इसका नियंत्रण महत्वपूर्ण है। मुँह–खुर रोग का नियंत्रण दो प्रमुख रणनीतियों पर आधारित है– प्रभावित और संपर्क में आने वाले पशुओं का वध और नियमित टीकाकरण। भारत जैसे देश में नैतिक सामाजिक एवं आर्थिक कारणों से संक्रमित पशुओं को मारने या वध नीति का अभ्यास नहीं किया जा सकता है। इसलिए विषाणु संचरण को कम करने के लिए टीकाकरण का ही सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।

भारत सरकार ने रोग के नियंत्रण, रोकथाम एवं संभावित उन्मूलन के उद्देश्य से देश में फुट एण्ड माउथ डिसीज कंट्रोल प्रोग्राम (FMD-CP) वर्ष 2003–04 में दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान शुरू किया था। इस कार्यक्रम के तहत छह माह के अंतराल पर सभी संवेदनशील पशुओं का टीकाकरण किया गया। नियंत्रण कार्यक्रम की निगरानी के लिए प्रत्येक जिले के 10 गावों से 10 गाय एवं 10 भैंसों के रक्त के नमूने एकत्र किए गए एवं उनकी जांच की गई (टीकाकरण के पहले और टीकाकरण के 21–30 दिनों बाद)।

क्षेत्रीय मुँह–खुर रोग अनुसन्धान केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा किए गए शोध कार्य पर आधारित, अप्रैल 2019 से हरियाणा देश का पहला राज्य बन गया है जिसे मुँह–खुर रोग एवं गलघोटू रोग के मिश्रित टीकों का उपयोग करने की अनुमती दी गई है। इस नीती से जहाँ एक तरफ राजस्व पर बोझ कम हुआ, वहीं दूसरी तरफ पशुओं को साल में चार बार की बजाय दो बार ही टीकाकरण करना पड़ा, जिसका सभी किसानों/पशुपालकों ने स्वागत किया। भारत सरकार ने सितंबर 2019 में राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम (NADCP) आरम्भ किया। इसमें 2025 तक रोग को नियंत्रण करने एवं 2030 तक इसके उन्मूलन के उद्देश्य से मुँह–खुर रोग के खिलाफ सभी संवेदनशील गाय, भैंस, भेड़, बकरी और सुअर की 100 प्रतिशत आबादी का टीकाकरण शामिल है।

मुँह–खुर रोग के खिलाफ सामान्य नियंत्रण/बचाव

जिनका पालन किया जाना चाहिए–

- रोगी पशुओं को अन्य पशुओं से तुरंत अलग करना चाहिए।
- सभी पशुओं का नियमित रूप से टीकाकरण करवाना चाहिए।
- संक्रमित पशुओं को एक सामान्य स्त्रोत से चरने या पीने तथा गांव के अन्य पशुओं के साथ घूमने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।
- नए पशुओं को तुरंत बाकी पशुओं के साथ नहीं मिलाना चाहिए– पहले खून की जांच होनी चाहिए तथा कम से कम 14 दिनों के लिए अलग रखना चाहिए (Quarantine)।
- मुँह–खुर रोग के लक्षण दिखने पर तुरन्त निकटतम पशु चिकित्सा अधिकारी को सूचित किया जाना चाहिए।
- संक्रमित परिसर से आने जाने वालों की आवाजाही कम से कम होनी चाहिए।
- फर्श, परिसर, बर्तन, संक्रमित सामग्री (बिस्तर और चारा) और संक्रमित पशुओं के संपर्क में आने वाले लोगों के कपड़े और जूतों को 4% सोडियम बाइकार्बोनेट से कीटाणुरहित किया जाना चाहिए।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

पशुपालन सम्बंधी जानकारियाँ पाएँ

नि:शुल्क SMS (मैसेज) द्वारा

पंजीकरण हेतु- 930-000-0857

(पशुपालक कॉल सेन्टर)

(सुबह 10 से 1 बजे तक) पर कॉल करें।

विस्तार शिक्षा निदेशालय

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, हिसार

प्रमुख गतिविधियाँ

1. पशुपालक प्रशिक्षण कार्यक्रम
2. पशुपालक कॉल सेन्टर (930-000-0857)
3. नि:शुल्क SMS सेवा
4. पशु पालन सम्बंधी पाठ्य सामग्री
   (पशुधन ज्ञान, डेयरी फ़ार्मिंग मार्गदर्शिका, कैसे करें पशुपालन, मुर्गीपालन मार्गदर्शिका इत्यादि)

930-000-0857

whatsapp

लुवास पशुपालक हेल्पलाइन नम्बर

लाला लाजपत राय पशु चिकित्सा एवं पशु विज्ञान विश्वविद्यालय
हिसार – 125004 (हरियाणा)